Con. 4. VIII-8.49
320

अंक 8
संख्या 8

बुधवार
25 मई
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

भारत (केन्द्रीय शासन तथा विधान मंडल) (संशोधन) विधेयक..... 427

अल्पसंख्यकों पर रिपोर्ट..... 427-487

भारतीय संविधान-सभा

बुधवार, 25 मई सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः आठ बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

भारत (केन्द्रीय शासन तथा विधान मंडल) (संशोधन) विधेयक

***माननीय डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं कि भारत (केन्द्रीय शासन तथा विधान मंडल) अधिनियम, 1946 में संशोधन करने के लिये एक विधेयक उपस्थित करने की अनुमति दी जाये।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

> ''कि भारत (केन्द्रीय शासन तथा विधान मंडल) अधिनियम 1946 में संशोधन करने के लिये एक विधेयक उपस्थित करने की अनुमति दी जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी:** श्रीमान्, मैं विधेयक को उपस्थित करता हूं।

परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में

***माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल** (बम्बई : जरनल): श्रीमान्, मैं आपके समक्ष परामर्शदातृ समिति के प्रतिवेदन पर, जो अन्तिम बार इस मास समवेत हुई थी, विचार करने का प्रस्ताव करने आया हूं। समिति का कार्य समाप्त होने के पश्चात् उसका विघटन कर दिया गया है। सभा को याद होगा कि अगस्त 1948 में, सम्भवतः अगस्त की 8 तारीख को, परामर्शदातृ समिति ने एक प्रतिवेदन पेश किया था और तत्पश्चात् अल्पसंख्यक समिति ने परामर्शदातृ समिति के प्रतिवेदन पर विचार करके अपने सुझाव रखे थे जिनमें सदन को परामर्श दिया गया था कि वह अल्पसंख्यकों के लिये विधान मंडलों में जनसंख्या के आधार पर स्थान रक्षित करने के रूप में कुछ राजनीतिक संरक्षण तथा कुछ अन्य संरक्षण भी स्वीकार कर ले।

हां, सभा को याद होगा कि जब यह प्रतिवेदन किया गया था, वह ऐसा समय था कि उस वक्त स्थितियां भिन्न थीं और विभाजन का प्रभाव भी पूर्णतः नहीं समझा गया

---

*इस चिह्न का यह अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

था या उस पर ध्यान नहीं दिया गया था। उस समय भी, जबकि विधान मंडलों में जनसंख्या के आधार पर स्थान रक्षित करने के सुझाव वाला प्रतिवेदन पारित किया गया था, इस विषय पर मतभेद था। अस्तु, अध्यन्त राष्ट्रीय विचारधारा के लोगों के एक वर्ग ने, जिसके नेता इस सभा के उपाध्यक्ष डाक्टर मुखर्जी थे, आरम्भ से ही संविधान में ऐसे रक्षणों का विरोध किया है। उस समय राजकुमारी अमृतकौर ने भी रक्षणों का कड़ा विरोध किया था, किन्तु उस समय अल्पसंख्यकों को भय था कि उन्हें जनसंख्या के आधार पर समुचित संख्या में प्रतिनिधित्व होगा या नहीं; और परामर्शदातृ समिति ने, मतभेद के होते हुए भी, उन अल्पसंख्यकों की ऐसी आशंकाओं को दूर करना अपेक्षित समझा जो उनके विचार में औचित्यपूर्ण समझी जा सकती थी। सभा को यह भी स्मरण होगा कि दक्षिण भारत के मुस्लिमों के प्रतिनिधि, श्री पोकर ने, जो अपरिवर्तनशील हैं तथा कट्टर मुस्लिम लीगी हैं, उस समय इस सदन में यह संशोधन रखा था, जब सुझाव सदन में पेश किये गये थे तब, कि पृथक् निर्वाचनों को रखा जाये अर्थात् वे जारी रहें, जिनका कि प्रभाव समस्त देश भर में और शायद बाहर भी, पूर्णत: ज्ञात है और अनुभूत है। परामर्शदातृ समिति के सभापति की हैसियत से मेरे सुझावों को सभा ने लगभग एकमत से स्वीकार कर लिया था और जब इन सुझावों को स्वीकार किया गया तब अल्पसंख्यकों ने व्यापक रूप से प्रशंसा की भावना व्यक्त की थी। कुछ समय पश्चात् हमें पुन: समवेत होना पड़ा क्योंकि, जहां तक पूर्वी पंजाब तथा पश्चिमी बंगाल के प्रान्तों का सम्बन्ध है, हमारे सुझाव अपूर्ण थे, क्योंकि जब 1948 के अगस्त सत्रों में सदन ने सुझावों को पारित किया था, तब विभाजन का प्रभाव अनुभूत या ज्ञात न था और उस समय जो बृहद् निष्क्रमण हुआ वह जारी ही था और सिखों की स्थिति उस समय लगभग अनिश्चित थी। ऐसे ही बंगाल में भी विभाजन का प्रभाव पूर्णत: समझा नहीं गया था और दोनों प्रान्त इस प्रश्न को तब तक स्थगित करना चाहते थे जब तक कि स्थिति पूर्णत: निश्चित न हो जाये और प्रभावों को पूरी तरह समझ न लिया जाये। बाद में दिसम्बर में इस प्रश्न पर विचार करने के लिये एक समिति नियुक्त की गई थी। परामर्शदातृ समिति ने पांच व्यक्तियों की एक उपसमिति नियुक्त की जिसमें हमारे आदरणीय अध्यक्ष भी सदस्य थे। पंडित जवाहरलाल नेहरू, मैं स्वयं, श्री मुन्शी तथा डा. अम्बेडकर इस समिति के सदस्य थे। इस समिति की बैठक हुई और उसने फरवरी में अपना प्रतिवेदन पेश किया। जब यह प्रतिवेदन पेश हुआ तब सिख सम्प्रदाय के सदस्य इस प्रतिवेदन पर विचार करने तथा इस विषय में अपनी जाति से परामर्श करने के लिये समय चाहते थे। और भी, जब यह प्रतिवेदन परामर्शदातृ समिति के समक्ष पेश हुआ था, तब मुस्लिम प्रतिनिधियों में से कुछ ने, 1948 के अगस्त सत्र में संविधान के पारित होने के बाद बहुत समय तक पूर्ण विचार करने के बाद, अपने विचारों को बदल लिया था; उन्होंने यह कहा कि सब रक्षण समाप्त हो जाने चाहियें और यह अल्पसंख्यकों के ही अपने हित में है कि विधान मंडलों में ऐसा रक्षण हटा देना चाहिये। बिहार के प्रतिनिधियों ने इस पर बहुत जोर दिया और दूसरे प्रतिनिधियों ने उसका समर्थन किया। उस समय कुछ मतभेद था और मैं तथा समिति भी उत्सुक थी कि ऐसे अत्यधिक महत्त्व के प्रश्न पर हमें जल्दबाजी में मत नहीं लेना चाहिये। क्योंकि सिख प्रतिनिधि अपनी स्थिति पर विचार करने के लिये समय चाहते थे अत: हमने स्वभावत: बैठक स्थगित कर दी और बाद में हम इस मास के आरम्भ में पुन: समवेत हुए।

जब हम इस बार समवेत हुए तब हमने स्वयं अल्पसंख्यकों के दृष्टिकोण में महान् अन्तर पाया। डाक्टर मुखर्जी ने प्रस्ताव किया कि विधान मंडल में जनसंख्या के आधार पर रक्षण सम्बन्धी खंड को हटा दिया जाये। जब यह सुझाव पेश किया गया, तब श्री मुनिस्वामी पिल्ले ने, जो कि अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, इस आशय का एक संशोधन रखा कि रक्षण सम्बन्धी उपबंध, जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, दस वर्ष के लिये रहने दिया जाये। परामर्शदातृ समिति में साधारणत: सदस्यों की राय, जो कि लगभग एकमत थी, यह थी कि यह रक्षण, जहां तक कि अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, उस कालावधि के लिये जारी रखा जाये तथा श्री मुनिस्वामी पिल्ले का संशोधन स्वीकार कर लिया जाये। सिख प्रतिनिधियों ने एक सुझाव रखा जो किसी हद तक पिछली स्थिति पर एक सुधार था। उस सुझाव का चाहे कुछ भी उद्देश्य हो, फिर भी परामर्शदातृ समिति ने सिखों के सुझाव पर उपयुक्त विचार करना उचित समझा, क्योंकि समिति के सदस्यों को, सिख सम्प्रदाय की, जो कि पंजाब के विभाजन से बहुत दु:ख उठा चुका है, भावनाओं तथा भावुकता के लिये सदा एक विशेष प्रकार के उत्तरदायित्व का अनुभव होता रहा है। पूरे वाद-विवाद के बाद, समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि सिखों ने रक्षण समाप्त करना स्वीकार करने का जो सुझाव मान लिया है वह बहुत सुधार है। यद्यपि इसके साथ एक दूसरा प्रस्ताव लगा दिया गया है जो वास्तव में उन्हें कुछ शर्तों पर रक्षण दे देता है और जिससे इस सुझाव का महत्त्व कम हो जाता है। समस्त स्थिति पर विचार करके समिति इस परिणाम पर पहुंची कि ऐसा समय आ गया है कि अल्पसंख्यक सम्प्रदायों ने बहुत सोच समझ के पश्चात् यह समझ लिया है कि अल्पसंख्यक सम्प्रदायों पर ही अतीत में ऐसे रक्षणों का बुरा प्रभाव पड़ा था और रक्षणों को हटा देना चाहिये।

परामर्शदातृ समिति के लगभग चालीस सदस्यों के सदन में, इस सुझाव के विरुद्ध केवल एकमात्र मत था। अत: हमने सोचा कि यद्यपि इस सभा ने अगस्त 1947 में उन सुझावों को स्वीकार कर लिया था, पर अब हमारा और सदन का कर्त्तव्य है कि हम इस सभा को यह परामर्श दें कि वह स्थिति पर पुनर्विचार करे और हम सभा के समक्ष ऐसा सुझाव रखें जो सभा के उद्घोषित सिद्धांतों के अनुकूल हो, जिनके अनुसार हमें एक शुद्ध लोकतंत्रात्मक राज्य स्थापित करना है जो शुद्धत: राष्ट्रीय सिद्धांतों पर आधारित होगा। अत: जब हमने परिवर्तित वातावरण पाया तो हमने यह अपना कर्त्तव्य समझा कि इस सभा में उस पूर्ववर्त्ती निर्णय को बदलने का सुझाव रखें, जो कि अस्थायी था, जैसा कि इस सभा ने कई बार कहा था। इन परिस्थतियों के ही अन्तर्गत यह सुझाव इस सभा में पेश किये गये हैं।

जहां तक सिख सम्प्रदाय का सम्बन्ध है, केवल एक ही सुझाव है जो वस्तुत: उस सिद्धांत से भिन्न नहीं है जो परामर्शदातृ समिति ने रखा है, क्योंकि परामर्शदातृ समिति ने श्री मुन्स्विामी पिल्ले का संशोधन भी स्वीकार कर लिया कि अनुसूचित जातियों के लिये रक्षण जारी रहना चाहिए। सिखों ने स्वयं यह सोचा कि उनमें से कुछ वर्ग ऐसे हैं जिन्होंने

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

अभी कुछ समय पहले ही धर्म परिवर्तन किया है, जो पहले अनुसूचित जातियों के हिन्दू थे और जो भी उन निर्योग्यताओं से दु:ख उठा रहे हैं जिनसे कि हिन्दू सम्प्रदाय के दोष के कारण अनुसूचित जातियों के हिन्दू पीड़ित हैं सिख लोग तो सिख सम्प्रदाय के दोष के कारण ही पीड़ित हैं किसी अन्य के कारण नहीं। वास्तव में, सच्ची बात तो यह है, कि ये धर्म परिवर्तित लोग अनुसूचित जातियां नहीं हैं या नहीं कहलानी चाहियें, क्योंकि सिख मत में अछूतपन नाम की कोई वस्तु नहीं है और न वर्गों का कोई अन्तर या वर्गीकरण है। किन्तु, इस देश में दुर्भाग्यवश हिन्दू धर्म में कुछ रूढ़ियों तथा पक्षपात का कुप्रभाव है, जो समाज में घुस आई हैं, इसी प्रकार हिन्दूओं के सुधरे हुए सम्प्रदाय में भी, जोकि सिख पंथ कहलाता है, समयानुसार किसी हद तक पतन हो गया है। वे एक भ्रांति में फंसे हुए हैं जिसे भय-भ्रांति कहते हैं। वे अनुभव करते हैं कि यदि इन अनुसूचित जातियों को, जो सिख मत ग्रहण कर चुके हैं, वे ही विशेषाधिकार नहीं दिये गये, जो कि अनुसूचित जातियों को, जो दिये गये हैं, तो यह सम्भावना है कि वे पुन: हिन्दू अनुसूचित जातियां बन जायें तथा उनमें विलीन हो जायें। अत: सभा के यह समझ में आ गया होगा, और मैं सभा से कुछ नहीं छिपाना चाहता, कि धर्म राजनैतिक प्रयोजनों के लिये केवल एक बहाना है, एक आड़ है। वास्तव में उच्च सिख धर्म ऐसा नहीं है जो वर्गभेद को मान्यता दे। यह मानना चाहिये कि आज सिखों को कई कारणों से दु:ख उठाना पड़ा है और उनके मस्तिष्क की वर्तमान स्थिति पर विचार करने में हमें बहुत कोमल भावनायें रखनी चाहियें और यथासम्भव उस स्थिति के उपचार के लिये उपबंध करना चाहिये। इसीलिये जब ये प्रस्ताव हमारे समक्ष आये तब मैंने वास्तव में उन्हें बलपूर्वक समझाया कि आप अपने धर्म को इतना मत गिराइये कि आप इतने नीचे गिर जायें कि कुछ थोड़ी-सी शाक-भाजी के लिये अपने धर्म के तत्व को छोड़ दें। किन्तु वे नहीं माने। अत: हम ज्यादा से ज्यादा यही कर सकते हैं कि उनकी जाति के उन लोगों को जो यह आरक्षण चाहते हैं हम अनुसूचित जातियों की श्रेणी में जाने के लिये कह दें। ये लोग अब अनुसूचित जातियों के साथ मिलने के लिये तैयार हो गये हैं; जो सिख सम्प्रदाय के लिये अच्छी चीज नहीं है, किन्तु फिर भी वे ऐसा चाहते हैं और हम अनुभव करते हैं कि कुछ समय के लिये, हम उनके लिये यह रियायत दे देंगे। सिद्धांततया यह स्थिति युक्तियुक्त है। वे सब अनुसूचित जातियां कहलायेंगी, रामदासी और तीन चार दूसरे, जो भी नाम हों, वे सब एक अनुसूचित जाति कहलायेंगे। सिख उन्हें अनूसूचित जाति सिख कह सकते हैं। आखिर, धर्म की दृष्टि में, ईश्वर की दृष्टि में और बुद्धिमान लोगों की दृष्टि में, वे सब एक ही हैं। ये रियायतें जनता के वर्ग विशेष के लिये रखी गई हैं, इसलिये, यद्यपि अनुसूचित जातियों के लोगों की ओर से भारी विरोध किया गया, उन्हें भी स्वभावत: यह आशंका थी और न्यायपूर्ण भय-भ्रांति थी कि यदि वे इसे मान गये या सभा ने इस स्थिति को स्वीकार कर लिया तो उनके वर्ग में से बलात् धर्म परिवर्तन द्वारा अनुसूचित जाति सिखों में लोगों के चले जाने का वास्तविक खतरा है, फिर भी हमने इसे स्वीकार कर लिया। अब हमारा उद्देश्य यह है, अथवा सभा का उद्देश्य यह होना चाहिये कि यथासम्भव शीघ्र और यथाशक्य द्रुतगति से इस श्रेणी विभाजन तथा अंतरों को समाप्त कर दें और सबको समानता के स्तर पर ले आयें। अतएव, चाहे स्थायी रूप में हम इसे मान्यता दे दें, यह बहुसंख्यकों का कर्त्तव्य है कि अपनी उदारता से अल्पसंख्यकों में भरोसे की भावना पैदा

करें, और इसी प्रकार अल्पसंख्यक सम्प्रदायों का भी यह कर्त्तव्य है कि वे अतीत को भूल जायें और इस पर विचार करें कि अच्छाई की उस भावना के कारण, जोकि विदेशियों के विचार में सम्प्रदाय और सम्प्रदाय के बीच संतुलन रखने के लिये अपेक्षित थी, देश को कितनी हानि उठानी पड़ी है। इससे वर्गों तथा सम्प्रदायों में विभाग तथा उप विभाग बन गये हैं, जो उन्होंने अपनी न्याय भावना के अनुसार पैदा करना ठीक समझा, कोई स्वार्थ इसमें बताने की बात तो अलग ही है। हमने, स्वतंत्र भारत की आधारशिला रखने का उत्तरदायित्व लिया है जो हमारा सबका प्रयत्न होगा और होना चाहिये, बहुसंख्यकों का भी और अल्संख्यकों का भी—पर मुख्यत: बहुसंख्यकों का—यही प्रयत्न होना चाहिये। अत: हमें उस स्थिति के अनुसार कार्य करना चाहिये जिसकी कि हमसे आशा की जाती है और ऐसा वातावरण पैदा करना चाहिये जिसमें जितनी जल्दी ये वर्ग विभाजन समाप्त हो जाये उतना ही अच्छा हो। अत: मैं सभा से, विशेषत: अनुसूचित जातियों से अनुरोध करता हूं कि वे इस रियायत पर, जो कि सिखों को दी गई है, कोई गुस्सा या स्पर्धा न करें, मैं मानता हूं कि यह रियायत ही है। सिखों के अपने हित में ही यह अच्छी बात नहीं है। किन्तु जब तक सिखों को यह विश्वास न हो जाये कि यह गलत है, तब तक मैं उन्हें यह छूट देना चाहता हूं, किन्तु यह हमारे मतानुसार न्यायपूर्ण सम्बन्धों के सिद्धांतों से असंगत नहीं होनी चाहिये। जहां तक दूसरे सम्प्रदायों का सम्बन्ध है, मेरे ख्याल में जब हम परामर्शदातृ समिति में समवेत हुए थे, जबकि ये सुझाव अल्पसंख्यकों की ओर से, विशेषत: मुस्लिमों की ओर से पेश हुए थे, तब पर्याप्त समय दिया गया था कि वे अपने निर्वाचन क्षेत्रों से, अपने सम्प्रदायों से और अन्य सम्प्रदायों से भी राय कर लेते। हमारी यह इच्छा नहीं है कि किसी जल्दी में किसी सम्प्रदाय को किसी बात के लिये वचनबद्ध करें। यदि वे वास्तव में ईमानदारी से इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि इस देश की परिवर्तित स्थिति में, यह सबके हित में है हम एक असाम्प्रदायिक राज्य का सच्चा और असली शिलान्यास करें, तो अल्पसंख्यकों के लिये सबसे अच्छा यही है कि वे बहुसंख्यकों की सद्भावना तथा न्यायबुद्धि पर विश्वास करें, और उन पर भरोसा करें। इसी प्रकार हमारा भी जोकि बहुसंख्या में हैं, कर्त्तव्य है कि हम इस पर विचार करें कि अल्पसंख्यकों की क्या भावना है और यदि हमारे साथ वैसा ही व्यवहार हो जैसा कि उनके साथ होता है तो हमारी क्या भावनायें होंगी। किन्तु दूरकाल में यही सबके हित में होगा कि वे भूल जायें कि इस देश में बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक जैसी कोई वस्तु है और यही समझें कि भारत में केवल एक ही सम्प्रदाय है (*साधु, साधु*)। श्रीमान्, इन विचारों के साथ मैं निम्न रूप में प्रस्ताव करता हूं कि परामर्शदातृ समिति के प्रतिवेदन पर विचार किया जाये:

> ''निश्चय किया जाता है कि संविधान सभा अपने 24 जनवरी सन् 1947 ई. के प्रस्तावानुसार नियुक्त परामर्शदातृ समिति द्वारा प्रस्तुत की हुई, तारीख 11 मई सन् 1949 ई. के प्रतिवेदन पर विचार आरम्भ करे जो अल्पसंख्यकों के कतिपय राजनैतिक अभिरक्षणों के बारे में है।

यह भी निश्चय किया जाता है—

1. कि इस सम्बन्ध में संविधान सभा द्वारा अब तक किये गये निर्णयों के बावजूद भारतीय संविधान के मसौदे के भाग 14 के उपबंधों को इस प्रकार संशोधित

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

किया जाये कि उक्त प्रतिवेदन में दी हुई, परामर्शदातृ समिति की सिफरिशों को कार्यान्वित किया जा सके; और

2. कि पूर्वी पंजाब की निम्नलिखित जातियों को अर्थात् मजहबी, रामदासी, कबीरपंथी और सिकलीगरों को प्रान्त की अनुसूचित जातियों की तालिका में शामिल किया जाये ताकि ये भी विधान मंडलों में अनूसूचित जातियों को दिये गये प्रतिनिधान के लाभ के अधिकारी हो सकें।''

***अध्यक्ष:** मुझे कुछ संशोधनों की सूचना प्राप्त हुई है। किन्तु मेरे विचार में ये संशोधन तब पेश होंगे जब हम प्रतिवेदन पर विचार करने के सम्बन्ध में इस प्रस्ताव को निबटा लें। वे दूसरे प्रस्ताव के सम्बन्ध में पेश होंगे जो मेरे विचार में माननीय सरदार पटेल बाद में पेश करेंगे। क्या यही बात है?

***श्री जैड.एच. लारी** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): दूसरा भाग भी इसी प्रस्ताव का एक भाग है। यह तो एक ही है। उन पर इकट्ठे ही विचार करना होगा।

***अध्यक्ष:** तब मैं मान लेता हूं कि दोनों भाग पेश हो चुके हैं और इसलिये हम इस समय दोनों संशोधनों पर विचार कर सकते हैं।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या इस प्रतिवेदन पर विचार करने के प्रस्ताव पर, इस समय संशोधनों को लिये बिना, व्यापक रूप से विचार किया जा सकता है? मैं जानना चाहता हूं कि क्या हम इस पर व्यापक वाद-विवाद कर सकते हैं?

***अध्यक्ष:** केवल एक ही प्रस्ताव है जो दो भागों में है और मैंने निर्णय दे दिया है कि दोनों को साथ लिया जाये। अतएव सारा प्रस्ताव, जिसमें दोनों भाग हैं, पेश हो चुका है और हम संशोधनों को लेंगे और बाद में हम मुख्य प्रस्ताव पर तथा संशोधनों पर भी बहस कर सकते हैं।

***श्री मोहम्मद इस्माइल खां** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, इससे पहले कि आप संशोधनों के प्रस्तावकों से अपने प्रस्ताव पेश करने के लिये कहें, क्या मैं जान सकता हूं, कि विधान मंडल में अल्पसंख्यकों वे प्रतिनिधित्व के समस्त प्रश्न पर वाद-विवाद हो सकता है अथवा अल्पसंख्यकों के उपबंधित स्थानों के रक्षण सम्बन्धी पिछले प्रतिवेदन पर पुनर्विचार के सवाल पर ही बहस हो सकती है?

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान्, मैं नहीं समझता कि मेरे माननीय मित्र श्री इस्माइल के प्रश्न का यह आशय है कि इस विषय के सारे सरगम पर वाद-विवाद हो। इस प्रश्न का समस्त इतिहास सदन के समक्ष नहीं है। हां, अपने भाषण में माननीय सदस्य वैसे ही उन परिस्थितियों की चर्चा कर सकते हैं जिनके फलस्वरूप यह परिवर्तन हुआ है। किन्तु नि:संदेह हम यहां बैठकर उन सब बातों पर तथ्यपूर्ण प्रस्ताव के रूप में बहस नहीं करने जा रहे हैं जो 1947 से अब तक हुई हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, एक औचित्य प्रश्न है, मैं नहीं जानता कि क्या सभा इस प्रस्ताव पर वाद-विवाद कर सकती है। प्रस्ताव की भाषा ऐसी है कि उसमें संशोधन पेश हो ही नहीं सकते। विद्यमान रूप में प्रस्ताव संविधान के मसौदे का संशोधन नहीं है। प्रस्ताव की ऐसी रचना की गई है कि इसे संविधान में शामिल नहीं किया जा सकता। इसमें तो मसौदा-समिति से प्रार्थना की गई है कि वह खंडों की रचना को बदलकर कुछ परिवर्तनों को स्थान दे दें। वर्तमान रूप में प्रस्ताव के दोनों भागों को लें तो इस पर केवल व्यापक वाद-विवाद हो सकता है हम उस पर इस प्रकार संशोधन पेश नहीं कर सकते जैसे कि यह संविधान के मसौदे का भाग हो।

***अध्यक्ष:** यह प्रस्ताव संविधान के मसौदे के अंग के रूप में, सभा के समक्ष, नहीं रखा गया है। पहले परामर्शदातृ समिति ने तथा सभा ने कुछ विनिश्चय किये थे। ऐसा विचार किया गया कि हाल ही में परामर्शदातृ समिति ने जो प्रतिवेदन दिया है वह पहले सभा के समक्ष विचारार्थ पेश किया जाना चाहिये। यदि उस प्रतिवेदन को सभा स्वीकार कर ले तो बाद में संविधान के मस्विदे में आवश्यक संशोधन कर दिये जायेंगे। इस समय हम परामर्शदातृ समिति की 11 तारीख की रिपोर्ट पर ही विचार कर रहे हैं। संविधान के मसौदे में संशोधन करने का प्रश्न बाद में उठेगा। यह तो उस प्रतिवेदन पर साधारण बहस ही है और क्योंकि उस प्रतिवेदन के अनुसार पूर्व निश्चित कुछ बातों के सम्बन्ध में कुछ परिवर्तन होने हैं अत: ये परिवर्तन भी प्रस्ताव के दूसरे भाग में दिखाये गये हैं। यदि ये परिवर्तन स्वीकार कर लिये जायेंगे तो मसौदे में तदनुसार संशोधन कर दिया जायेगा।

***श्री महावीर त्यागी:** फिर तो मैं समझता हूं कि हम जो वाद-विवाद करने वाले हैं वह एक प्रकार का व्यापक वाद-विवाद होगा।

***अध्यक्ष:** पहले प्रस्ताव पर संशोधन पेश होंगे, फिर व्यापक वाद-विवाद होगा।

***श्री मुहम्मद इस्माइल खां:** श्रीमान्, संविधान सभा की गत बैठक में सारे प्रश्न पर वाद-विवाद हुआ था। यह विनिश्चय किया गया था कि अल्पसंख्यकों के लिये स्थानों का रक्षण किया जायेगा। यदि सुझाव यह हो कि रक्षण को हटा दिया जाये, तो क्या इससे समस्त प्रश्न पर फिर से बहस हो सकती है कि अल्पसंख्यकों का विधान मंडलों के लिये चुनाव कैसे हो? अथवा, क्या वाद-विवाद इस बात तक ही सीमित है कि रक्षण को रखा जाये या नहीं?

***अध्यक्ष:** इस समय परामर्शदातृ समिति का प्रतिवेदन केवल रक्षण के प्रश्न तक ही सीमित है, इसलिये इस समय हम केवल उसे ही ले सकते हैं।

***श्री मुहम्मद इस्माइल खां:** श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि उसके अलावा सारे संशोधन अनियमित होंगे।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, किसी विनिश्चय पर, जो कि पहले किया जा चुका हो, कार्यप्रणाली के नियमों के नियम 32 के अनुसार ही फिर

[श्री जसपतराय कपूर]

से बहस हो सकती है। उस नियम में लिखा है कि कोई प्रश्न, जिस पर एक विनिश्चय हो चुका, दुबारा उठाया नहीं जा सकता, जब तक कि उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के एक-चौथाई सदस्य सहमत न हो जायें। अतएव, श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि केवल उसी प्रश्न पर पुनः बहस हो सकती है जिस पर आज उपस्थित सदस्यों के एक-चौथाई सहमत हो जायें। जब हम श्री इस्माइल द्वारा भेजे गये संशोधन पर आते हैं तो यह प्रश्न उठता है कि इसके कौन-कौन से भाग ऐसे हैं जिनके सम्बन्ध में आज उपस्थित सदस्यों के कम से कम चतुर्थांश पुनर्विचार के लिये तैयार हैं।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि वह प्रश्न उठेगा। मुझे पूरा विश्वास है कि चतुर्थांश से अधिक, वास्तव में सभा का बहुमत, परिवर्तनों के पक्ष में है।

***श्री जसपतराय कपूरः** यह ठीक है, श्रीमान्, जहां तक कि माननीय सरदार पटेल द्वारा सभा के समक्ष पेश किये गये प्रस्ताव का सम्बन्ध है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि सरदार पटेल द्वारा सिफारिश किये हुए रूप में पुनर्विचार करने के प्रश्न पर जो लगभग समूची सभा सहमत हो जायेगी। मेरे माननीय मित्र श्री इस्माइल ने जो प्रश्न उठाया है कि क्या कोई ऐसे मामले पर, जो प्रतिवेदन में नहीं हो, विचार किया जा सकता है, उस विषय में मेरा निवेदन यह है कि उस पर तभी विचार किया जा सकता है जब यहां उपस्थित 25 प्रतिशत सदस्य सहमत हो जायें।

***अध्यक्षः** जब यह प्रश्न उठेगा तब हम उस पर विचार करेंगे।

***मि. बी. पोकर साहिब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, जो औचित्य प्रश्न उठाया गया है, उस पर मैं यह कहना चाहता हूं। विद्यमान प्रस्ताव के अधीन सभा द्वारा पहले विनिश्चित रक्षणों को हटा देने का सुझाव है और यह रक्षण इस तथ्य पर आधारित है कि अल्पसंख्यकों के लिये अपनी शिकायत पेश करने का कोई उपाय होना चाहिये। उसी उद्देश्य से पृथक् प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर भी बल दिया गया था। जब यह लक्षण समाप्त हो जाता है तो विधान मंडल में अपना प्रतिनिधित्व कराने का एकमात्र अवसर भी चला जाता है। अतः पृथक् प्रतिनिधित्व का प्रश्न इस प्रतिवेदन पर विचार करते समय स्वयं उठ जाता है।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मुझे आपको धन्यवाद देना है कि आपने मुझे तथा मेरे मित्रों को सभा के समक्ष एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न रखने का अवसर दिया है जिसमें अल्पसंख्यकों को, केवल मुस्लिमों को ही नहीं, वरन् अन्य अल्पसंख्यकों को भी अत्यन्त दिलचस्पी है। मैं सर्वप्रथम संशोधन को पेश करता हूं जो मेरे नाम में तथा मेरे मित्रों के नाम में है।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं:

(क) कि प्रस्ताव की दूसरी कण्डिका की उप-कण्डिका (1) को हटा दिया जाये, तथा उप-कण्डिका (2) की संख्या बदलकर उप-कण्डिका (1) कर दिया जाये।

(ख) इस प्रकार निर्मित उप-कण्डिका (1) के अनुसार निम्न उप-कण्डिकायें जोड़ी जायें:

''(2) कि देश के केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलों में मुस्लिमों तथा अन्य अल्पसंख्यक सम्प्रदायों के लिये जनसंख्या के आधार पर स्थानों के रक्षण के सिद्धांत की परिपुष्टि की जाये तथा उसे जारी रखा जाये; और

(3) कि इस सम्बन्ध में इस सभा द्वारा पहले किये गये किसी विनिश्चयों के होते हुए भी, संविधान के मस्विदे के भाग 14 को तथा किसी अन्य सम्बद्ध अनुच्छेद को इस प्रकार संशोधित किया जाये कि यह पक्का हो जाये कि उपरोक्त उपखंड (2) के अनुसार रक्षित स्थान उसी सम्प्रदाय के लोगों से भरे जायेंगे, जो कि उसी अल्पसंख्यक जाति के मतदाताओं के निर्वाचन-मंडलों द्वारा चुने जायें।''

***श्री जसपतराय कपूरः** श्रीमान्, मैंने नियम 32 को ध्यान में रखते हुए इस संशोधन के भाग (ख) के खंड (3) को पेश करने पर आपत्ति की थी। हमने पहले ही एक बार यह निश्चय किया था कि संयुक्त निर्वाचक मंडल होंगे और पृथक् निर्वाचक मंडल नहीं होंगे। मेरा निवेदन है कि इस विनिश्चय पर तब तक पुनर्विचार नहीं किया जा सकता है जब तक कि आज उपस्थित 25 प्रतिशत सदस्य इस पर सहमत न हों। मेरा निवेदन है कि नियम 32 स्पष्टत हमारे मार्ग में अड़ता है।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिबः** श्रीमान्, निवेदन यह है कि अल्पसंख्यकों के समस्त प्रश्न पर, वास्तव में हमारे समक्ष पेश की गई रिपोर्ट तथा प्रस्ताव से पुनर्विचार आरम्भ हो गया है। अतएव मेरा संशोधन उस सुझाव का केवल समुचित भाग ही है, जिसने कि समूचे प्रश्न को उठा दिया है। जब सभा के विनिश्चय का उस भाग पर जो अल्पसंख्यकों के लिये स्थानों के रक्षण से सम्बद्ध है, पुनर्विचार आरम्भ हो गया है तो दूसरे भाग पर भी पुनर्विचार आरम्भ हो जाता है। अतएव मैं नहीं समझता कि इस सम्बन्ध में सभा के किसी नियम का उल्लंघन होता है। इसलिये, श्रीमान, मैं आपकी अनुमति से अपने संशोधन पर, जो कुछ मुझे कहना है, कह सकता हूं।

जैसे कि मैं कह रहा था, पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल पर प्रभाव डालने वाली अल्पसंख्यक समस्याओं पर प्रतिवेदन देने के लिये नियुक्त उपसमिति गत वर्ष 23 नवम्बर को समवेत हुई तथा उसने सिफारिश की कि इस सभा ने अगस्त 1947 में अन्य प्रान्तों के लिये जो प्रबंध मंजूर किये हैं, वे ही इन प्रान्तों पर भी लागू किये जायें और कोई परिवर्तन करना अपेक्षित नहीं है। इस प्रतिवेदन पर विचार करते समय परामर्शदातृ समिति ने सारे प्रश्न पर भी पुनर्विचार कर डाला। श्रीमान्, मैं समिति की कार्यवाही पर जरा भी आपत्ति नहीं करता। मैं तो यही चाहता हूं कि अल्पसंख्यकों तथा उनके लिये आरक्षणों के प्रश्न पर भी पुनर्विचार किया जाये, जिसमें कि पृथक् निर्वाचक मंडलों का प्रश्न भी, जोकि इस प्रश्न का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा स्वाभाविक भाग है, शामिल है।

***अध्यक्ष:** क्या मैं पहले इस औचित्य प्रश्न को, जो श्री कपूर ने उठाया है, निबटा दूं? क्या कोई अन्य सदस्य इस औचित्य प्रश्न पर कुछ कहना चाहता है?

***श्री जैड.एच. लारी:** अध्यक्ष महोदय, माननीय सरदार पटेल द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का उद्देश्य अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व तथा उनके लिये राजनैतिक आरक्षणों के प्रश्न को पुन: उठाना है। एक बार विधान मंडलों में अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व का प्रश्न पुन: उठ जाता है, तो केवल रक्षणों के हटाने का प्रश्न ही नहीं, प्रस्तुत सारे सम्बद्ध विषय अवश्यमेव पुन: उठ जाते हैं। आप स्थानों के रक्षण को हटाने के प्रश्न पर तब तक विचार नहीं कर सकते, जब तक कि आप यह विचार न करें कि उनका प्रतिनिधित्व किस प्रकार होना है। अतएव, मेरा निवेदन यह है कि यदि सभा अल्पसंख्यकों के लिये राजनैतिक आरक्षणों पर विचार करने के लिये तैयार है, तो यह किसी सदस्य को अधिकार है कि वह विधान मंडलों में अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में और राजनैतिक आरक्षणों के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश कर सके। अतएव, मेरा ख्याल है कि समस्त संशोधन, जिनकी कि सूचना दी गई है, प्रसंगानुकूल है और उन्हें पेश करने की अनुमति मिल जानी चाहिये।

***पं. बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, क्या एक बात की ओर आपका ध्यान आकृष्ट कर सकता हूं? 27 अगस्त 1947 को श्री पोकर ने निम्न रूप में एक संशोधन पेश किया था।

> ''अल्पसंख्यकों, मूलाधिकारों आदि सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति के प्रतिवेदन पर, जो अल्पसंख्यकों के अधिकारों के विषय में था, विचार करने पर संविधान सभा का यह अधिवेशन निश्चय करता है कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलों के समस्त चुनाव, जहां तक मुस्लिमों का सम्बन्ध है, पृथक् निर्वाचक-मंडलों के आधार पर होने चाहिये।''

सभा ने इस विशिष्ट प्रस्ताव को रद्द कर दिया था। इस बात को ध्यान में रखते हुए तथा नियम 32 को ध्यान में रखते हुए, जो इस सभा की कार्यवाहियों का आनियमन करता है, मेरे विचार में यह संशोधन अनियमित होगा, जब तक कि इस सभा के 25 प्रतिशत सदस्य सहमत न हो जायें।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, इस औचित्य प्रश्न पर मैं उन बातों से सहमत हूं जो श्री लारी ने कही हैं। श्रीमान्, मेरा ख्याल है कि इस प्रतिवेदन पर विचार करने में हम उन विनिश्चयों को बदल रहे हैं जो कि हम पहले ही कर चुके हैं। मेरे माननीय मित्र श्री कपूर ने जो औचित्य प्रश्न उठाया है वह सरदार पटेल के प्रस्ताव पर भी उतना ही लागू होता है जितना कि श्री इस्माइल के संशोधन पर लागू होता है। यदि प्रस्ताव के विषय में सभा का पूर्ववर्त्ती निर्णय बदला जा सकता है तो उस प्रस्ताव पर संशोधन के सम्बन्ध में ऐसा क्यों नहीं किया जा सकता? इसके अतिरिक्त यह बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है अत: समुचित संशोधनों को पेश करने के लिये प्रत्येक अवसर दिया जाना चाहिये। इस महत्त्वपूर्ण मामले पर मैं राष्ट्र के प्रतिनिधियों से स्पष्ट निर्णय चाहता हूं। अतएव, मेरा निवेदन है, श्रीमान्, कि ऐसे संशोधनों की केवल अनुमति ही नहीं दी जानी चाहिये, अपितु सभा को उनका स्वागत करना चाहिये।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, अभी जो संशोधन पेश हुआ है वह तो प्रस्ताव का पूर्ण निराकरण ही है और मैं आपका निर्णय चाहता हूं कि क्या यह संशोधन के रूप में पेश हो भी सकता है?

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब:** श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि जब सभा ने माननीय सरदार पटेल को इस प्रस्ताव के पेश करने की अनुमति दी तो, मेरे विचार में, इसने मेरे संशोधन के लिये भी अनुमति दे दी, क्योंकि सरदार के प्रस्ताव में ऐसे प्रश्न को पुन: उठाया गया है जिस पर पहले एक बार सभा विनिश्चय कर चुकी है। जब उस विनिश्चय के एक महत्त्वपूर्ण भाग पर पुन: विचार किया जाता है, तो श्रीमान्, मेरे विचार में, उससे दूसरा भाग अपने आप विचारार्थ प्रस्तुत हो जाता है।

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में दो औचित्य प्रश्न उठाये गये हैं। पहला यह है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों के प्रश्न पर सभा पहले ही निर्णय कर चुकी है, और यह प्रश्न दुबारा नहीं उठाया जा सकता, जब तक कि एक चौथाई सदस्य इस पर सहमत न हो जायें। दूसरा प्रश्न, जो प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना ने उठाया है, यह है कि जो संशोधन पेश करने के लिये प्रयत्न किया जा रहा है, वह मूल प्रस्ताव का नकारात्मक है इसलिये इसे संशोधन नहीं माना जा सकता।

पहले प्रश्न पर, मेरा ख्याल यह है कि उस समय सभा के समक्ष जो प्रस्ताव था उस पर श्री पोकर ने एक प्रस्ताव या उसी की तरह कोई चीज पेश की थी और उनको रद्द करके सभा ने प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था। उस समय स्वीकृत प्रस्ताव पर पुनर्विचार करने का प्रस्ताव आज पेश हो रहा है। अतएव, किसी संशोधन या ऐसी कोई चीज पर भी, जो उस मूल प्रस्ताव पर संशोधन के रूप में हो, वाद-विवाद हो सकता है। इसलिये मेरा निर्णय यह है कि जो पहला औचित्य प्रश्न उठाया है वह सिद्ध नहीं होता और संशोधन नियमित है।

जहां तक कि दूसरे औचित्य प्रश्न का सम्बन्ध है, मेरे विचार में यह संशोधन नकारात्मक नहीं है क्योंकि स्वयं संशोधन में ही दूसरा एक उपाय सुझाया गया है और इसलिये वह नकारात्मक नहीं है। मेरा निर्णय यह है कि दूसरा औचित्य प्रश्न भी सिद्ध नहीं होता।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब:** अध्यक्ष महोदय, मैं कह रहा था कि जब परामर्शदातृ समिति पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब के प्रश्न पर विचार करने के लिये नियुक्त की गई विशिष्ट उपसमिति की सिफारिशों पर विचार कर रही थी, तब उसने सभी प्रान्तों के अल्पसंख्यकों के समस्त प्रश्न को फिर उठा दिया। जैसा कि मैंने कहा है, मुझे समिति की इस कार्यवाही पर जरा भी आपत्ति नहीं है। मैं केवल यही चाहता हूं कि अल्पसंख्यकों तथा उनके राजनैतिक आरक्षणों का समूचा प्रश्न एक बार पुन: सभा के समक्ष रख दिया जाना चाहिये, जिससे कि सभा, इस समय, जबकि यह संविधान को पारित करने की अन्तिम स्थिति में है, इस विषय पर सोच-समझकर पुनर्विचार कर सके।

[श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब]

यह ऐसा विषय है कि जिसका अल्पसंख्यकों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है और इसलिये यह आवश्यक है कि सभा इस समय इस विषय पर पुनर्विचार करे। श्रीमान्, परामर्शदातृ समिति के प्रतिवेदन में उल्लेख है और इस पर माननीय सरदार पटेल ने व्याख्या भी की है कि अगस्त 1947 से जबकि सभा ने पिछला विनिश्चय किया था स्थितियां बहुत बदल गई हैं। प्रतिवेदन में यह भी कहा गया है कि यह अब उचित नहीं है कि अनुसूचित जातियों तथा आदिम जातियों के अतिरिक्त अल्पसंख्यकों के लिये वैधानिक रक्षण हो। मैं स्वीकार करता हूं कि स्थितियां बदल गई हैं, और संदेह तथा संशय तथा पक्षपात-भावनायें, जो विद्यमान थीं, अब तक व्यर्थ सिद्ध हो चुकी हैं और वातावरण साफ हो गया है। मुसलमानों ने दिखा दिया है कि यह संदेह अनुपयुक्त तथा अकारण थे। उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि वे देश की प्रतिरक्षा के लिये तथा मातृभूमि का सम्मान बनाये रखने के लिये सबसे आगे हैं। हां, श्रीमान्, देश में यही परिवर्तन हुआ है, किन्तु इस परिवर्तन से यह पक्ष सिद्ध नहीं होता कि मुस्लिमों और अन्य अल्पसंख्यकों के लिये यह थोड़े से संरक्षण भी हटा दिये जायें। दूसरी ओर इस परिवर्तन से यह सिद्ध होता है कि उन्हें अधिक अच्छे और सच्चे संरक्षण दिये जायें। मेरी यही राय है। अब जो स्थिति है उससे यह पता लगता है कि मुस्लिम स्पष्ट और खुले दिल के लोग हैं और वे जो कुछ कहते हैं वही उनका आशय होता है और कि वे जो कुछ अब तक कहते रहे हैं वही उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि अन्य कोई जनवर्ग मातृभूमि के जितने निष्ठावान्, नागरिक हैं उतने ही मुसलमान भी हैं।

श्रीमान्, यह कहना कि माननीय प्रधानमंत्री और माननीय सरदार पटेल और अध्यक्ष महोदय, आप भी न्याय तथा उदारता की भावना से ओतप्रोत हैं, और बात है। जनता के समस्त वर्ग आप पर पूरा भरोसा करते हैं यह एक बात है। किन्तु यह कहना कि सरकार के लोगों के प्रत्येक भाग में भी वही न्याय-भावना व्याप्त है, दूसरी बात है। जैसा कि मैंने कहा है, सरकार के प्रमुख सज्जन हैं और उनमें न्याय तथा उदारता की भावना है। किन्तु वे सब जगह नहीं जा सकते। वे प्रत्येक स्थान पर तथा प्रत्येक समय पर उपस्थित नहीं हो सकते। अतएव कई स्थानों पर ऐसी बातें होंगी जो जनता के कुछ वर्गों में असंतोष तथा निराशा पैदा कर सकती हैं। फिर, वे यह बातें सरकार के समक्ष कैसे रखें? क्या कोई कह सकता है कि इस प्रकार काम चलेगा कि सरकार के लोगों के प्रत्येक वर्ग द्वारा जनता के मामलों के प्रबंध के विषय में किसी को कोई शिकायत न रहे? स्पष्टतः ऐसा कोई दावा नहीं किया जा सकता। फिर, यदि कुछ भी हो, जनतंत्रात्मक राज्य में लोगों को शासन के प्रमुख तथा सामान्यतः सरकार के समक्ष अपनी शिकायतें पेश करने का अवसर तथा अधिकार मिलना चाहिये।

फिर, आगे चलकर प्रतिवेदन में कहा गया है कि समिति को संतोष है कि अल्पसंख्यकों की स्वयं यह भावना है कि स्थानों का वैधानिक रक्षण समाप्त कर दिया जाना चाहिये। मैं नहीं जानता कि समिति को यह संतुष्टि कैसे हो गई। जहां तक मुसलमानों का सम्बन्ध है, इस माननीय सदन के कुछ सदस्य रक्षण को समाप्त करने के लिये शायद तैयार हो गये हों। मैं इसे मानता हूं पर वह सहमति किस प्रकार की थी? जिस जाति का प्रतिनिधित्व वे करना चाहते हैं, उस जाति के सम्बन्ध में उनके कार्य किस प्रकार के हैं? उनमें से

कुछ ने तो उस दल को ही छोड़ दिया है जिसकी ओर से वे चुने गये हैं और जिसके बल पर वे सभा में आये थे। इस प्रकार उन्होंने अपने प्रतिनिधित्व को समाप्त कर दिया है। अतएव, यह समझना कि वे मुसलमानों के अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि हैं, मेरे विचार में, ठीक नहीं है। मुझे पता है कि वे पिछले कुछ समय से इस सम्बन्ध में अपने विचारों का प्रचार करते रहे हैं और अब हमारे समक्ष प्रतिवेदन आ गया है।

श्रीमान्, मेरा दावा है और मैं निश्चितरूपेण कहता हूं कि मुसलमान, समूचा सम्प्रदाय, रक्षण छोड़ने के पक्ष में नहीं है। इतना ही नहीं, वे इस सभा से प्रार्थना करते हैं कि पृथक् निर्वाचक मंडलों को रखा जाये, क्योंकि इसी से उन्हें विधान मंडलों में उचित प्रकार का प्रतिनिधित्व मिल सकता है। मुस्लिम लीग ने, जोकि अब भी मुस्लिम सम्प्रदाय की प्रतिनिधि संस्था है, इसी वर्ष एक बार से अधिक बार स्थानों के रक्षण के पक्ष में निश्चित विचार प्रकट किये हैं, किन्तु उसने पृथक् निर्वाचक-मंडलों को बनाये रखने के लिये भी जोर डाला है। जहां तक मुस्लिम अल्पसंख्यकों का सम्बन्ध है यही स्थिति है।

अब, यदि बहुसंख्यक जाति या शासनारूढ़ दल इन संरक्षणों को हटाना चाहता है तो वह दूसरी बात है। किन्तु मेरा निवेदन है कि अल्पसंख्यकों के कन्धों पर इन संरक्षणों को हटाने का उत्तरदायित्व डालना उचित नहीं है।

जब हमने यह प्रतिवेदन तथा अन्य एतद्सम साहित्य पढ़ा तो हमें यह ख्याल पैदा हुआ कि अल्पसंख्यकों की धार्मिक आधार पर आपत्ति की जा रही है। वास्तव में अन्य देशों में, विशेषत: यूरोप के देशों में, अल्पसंख्यक मुख्यत: भाषा और मूलवंश के आधार पर बनते हैं, किन्तु यहां हमारे देश में स्थिति मूलत: भिन्न है। यहां एक प्रकार के लोग दूसरे प्रकार के लोगों से मुख्यत: अपने धर्म के आधार पर ही भिन्न होते हैं। धर्म के अन्तर से जीवन में अन्तर आ जाता है और जीवन से सम्बद्ध मामलों और चीजों पर दृष्टिकोण में अन्तर आ जाता है। इस देश में मनुष्य को अपने धर्म के हिसाब से आंका जाता है। यहां तक कि मैं कह सकता हूं कि अनुसूचित जातियों का भी आधार धार्मिक विश्वास ही है। देश में जो धार्मिक भावनायें प्रचलित हैं उन्हीं के आधार पर वे अल्पसंख्यक जाति बन गये हैं श्रीमान्, मैं नहीं समझता कि लोगों के एक वर्ग को दूसरे वर्ग से अलग करने के लिये धर्म को आधार बनाने में कोई हानि नहीं है। चाहे कुछ भी हो, इस देश में तो यही स्थिति है और हम इससे बच नहीं सकते। जब हम कहते हैं कि एक हिन्दू है और दूसरा मुसलमान है तो कोई इस बात से इन्कार नहीं कर सकता। है कि दोनों में अन्तर है, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि वे एक दूसरे का गला काटने के लिये दौड़ें। इस अन्तर को ठीक करना है और वह ठीक हो सकता है। हम सामंजस्य ही चाहते हैं, भौतिक एकता या कठोर समन्वय नहीं। हम नहीं चाहते कि किसी देश की जनसंख्या में एक ही धर्म के उपासक हों। एकता के प्रवर्त्तकों का यह विचार नहीं है। एकता का अर्थ है सामंजस्य। संसार के अन्य भागों में भी लोगों के विविध वर्गों के विषय में जो अन्तर होते हैं उन्हें ठीक करना। सामंजस्य तभी सम्भव है जबकि सभी वर्ग संतुष्ट हों, खुश हों। यदि वे देखें कि उन्हें उनके अधिकार मिल रहे हैं, उन्हें तंग नहीं किया जा रहा, उनकी सुनी जाती है तथा उनके साथ मनुष्यों का सा व्यवहार होता है, तो शांति स्वयं हो जायेगी। बार-बार कहा जाता है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों से लोगों में झगड़ा

[श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब]

तथा शत्रुता पैदा होती रही है। क्या इन झगड़ों का कारण पृथक् निर्वाचक मंडल है श्रीमान्! अब तक कई वर्षों से पृथक् निर्वाचक मंडलों के आधार पर चुनाव होते रहे हैं। यदि वास्तव में जनसाधारण को इस प्रकार के निर्वाचनों पर गुस्सा होता, तो किसी और समय अधिक झगड़ा निर्वाचनों के समान होता। मैं चाहता हूं कि सभा के माननीय सदस्य मुझे बतायें कि क्या उन्होंने निर्वाचनों के समय इस प्रकार के झगड़ों, दंगों या उपद्रवों की चर्चा सुनी है। वस्तुस्थिति यह है कि जनसाधारण मानते हैं कि लोगों के विविध वर्गों को अपने-अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है। अतएवं इस पर उन्हें क्षोभ नहीं है। मैं कहता हूं कि विधान मंडलों में अपने-अपने प्रतिनिधि भेजने के प्रत्येक वर्ग के इस अधिकार के कारण साधारणतः लोग गांवों में तथा अन्यत्र सुखपूर्वक मिल-जुलकर रहते रहे हैं। श्रीमान्, सदा लोग एक दूसरे का गला कांटने के लिये नहीं दौड़ते। यदि ऐसा होता और यदि यह पृथक् निर्वाचन मंडलों की पद्धति ही इसका कारण होती, तो उस पद्धति के कार्यान्वित करने के समय अर्थात् निर्वाचनों के समय ही विशेषतः झगड़े पैदा होते। तो फिर झगड़े की जड़ क्या है? झगड़े की जड़ यह है कि अल्पसंख्यक जो भी मांग करें उनका विरोध किया जाता है और मेरे विचार में जनसाधारण को उन मांगों के विरोध करने की आदत नहीं है, वरन् राजनैतिक दल ही यह सब कुछ किया करते हैं, क्योंकि राजनैतिक दलों के इस दृष्टिकोण की जड़ में शक्ति का प्रेम है। श्रीमान्, यूरोप के अन्य देशों में अल्पसंख्यकों के लिये विशेष व्यवस्था की गई है, पोलैंड, यूगोस्लेविया, बुलगारिया, अलबानिया, यूनान, तुर्की आदि देश में ऐसा किया गया है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): क्या इन देशों में कहीं भी पृथक् निर्वाचक मंडल है?

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिबः** अलबानिया में, उस छोटे से देश में, केवल 10 लाख जनसंख्या वाले देश में, थोड़ी सी जनसंख्या के छोटे से देश में उन्होंने अल्पसंख्यकों के लिये एक प्रकार पृथक् निर्वाचन मंडल पद्धति को स्वीकार कर लिया है। वहां भी उन्हें आशंका नहीं है कि पृथक् निर्वाचक मंडल से देश और भी छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट जायेगा। उन्होंने सोचा कि अल्पसंख्यकों के लिये ऐसा करना स्वाभाविक होगा। अन्य देशों में पृथक् निर्वाचन मंडलों का प्रश्न नहीं उठा, पर अल्पसंख्यकों ने जो भी सरंक्षण मांगे, वे उन्हें मिल गये। यह मुख्य बात है। उन्हें वे संरक्षण मिल गये जिनकी कि उन्हें देशों की स्थिति के अनुसार आवश्यकता थी। हमारे देश में, यहां जो स्थितियां हैं, उनके अंतर्गत पृथक् निर्वाचक मंडलों से ही अल्पसंख्यकों को संतोष हो सकता है और इसी से वे अन्य जातियों के साथ समानता का पद प्राप्त कर सकते हैं। यही कारण है कि इस देश में हम पृथक् निर्वाचक मंडलों के लिये प्रयत्न करते रहे हैं और हम उनको बनाये रखने के लिये आंदोलन करते रहे हैं। जब पश्चिमी देशों में निजी कानून, धार्मिक शिक्षण आदि विषयों में अल्पसंख्यकों के लिये विशेष व्यवस्था की थी और पश्चिम में निर्वाचन-सम्बन्धी मामलों में भी ऐसी व्यवस्था की भी, तब यह व्यवस्था राष्ट्रों की लीग में एकत्रित संसार के महान् नीतिज्ञों के नियंत्रण तथा तत्वाधान में की गई थी। यदि यह गलत बात होते तो क्या संसार के यह महान् राजनीतिज्ञ इन विशेष प्रबन्धों के लिये सहमत हो जाते विशेषतः

प्रथम विश्व युद्ध के बाद में? उनके विचार में ऐसी व्यवस्था में कोई बुराई नहीं है। यहां तक कि पोलैंड में रूथेनी लोगों के विषय में उन्होंने स्थानीय स्वशासन को भी स्वीकार कर लिया। संसार में महान् राजनीतिज्ञों के यह विचार उस समय थे, जबकि वे एक महानतम संकट से निकले ही थे। मेरा आशय प्रथम विश्व युद्ध से है। अतः श्रीमान्, इसमें कोई बुराई नहीं है यदि हम इस देश में पृथक् निर्वाचक-मंडलों की मांग करे। पहले तो हमारा देश ब्रिटिश-शासन के अधीन था। यह कहा जाता है और स्वतंत्र रूप से कहा जाता है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों की पद्धति का अंग्रेजो ने लोगों में फूट डालने और उन पर अपना साम्राज्य अटल बनाने के लिये ही आविष्कार किया था। किन्तु इस समय विदेशी यहां नहीं हैं। अब हम स्वतंत्र राष्ट्र हैं लोगों को पृथक् निर्वाचक-मंडलों का अधिकार मिले तभी यह सम्भव है कि उन लोगों के सच्चे प्रतिनिधि जाकर सरकार के समक्ष या विधान मंडल में या बहुसंख्यक सम्प्रदाय के समक्ष अपने विचार प्रकट कर सकें। वे तो केवल आत्म अभिव्यक्ति का अधिकार मांगते हैं। जो जिस विषय का आन्दोलन करें उनके विषय में निर्णय किसी प्रकार भी किया जा सकता है, किन्तु पृथक् निर्वाचक मंडलों का तो यही आशय है कि उन्हें आत्म-अभिव्यक्ति का अधिकार मिले, और उसके साथ ही, समागम का अधिकार भी मिले। श्रीमान्, अब भी इसमें क्या हानि है कि सभा मेरी बात को सुने और मेरे विचारों को सुने? वे जिस प्रकार चाहें निर्णय कर सकते हैं, पर क्या उनसे यह सुनवाई का अधिकार भी छिन जाना चाहिये? कहा जाता है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों से पार्थक्य की भावना पैदा होती है और उसके विषय में कठोर बातें कही जा रही हैं। श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि कठोर शब्दों का अर्थ युक्तियां नहीं होता। पृथक् निर्वाचक मंडलों का अर्थ पार्थक्य नहीं है, इसका अर्थ तो यह है कि लोगों के एक वर्ग और दूसरे वर्ग में भेदों को मान लिया जाये; इसका यह आशय है कि इन भेदों को मान्यता दी जानी चाहिये और जब वे भेद उभर आयें तो उन भेदों से पीड़ित लोगों के सच्चे प्रतिनिधियों की बात प्राधिकारियों द्वारा सुनी जानी चाहिये; इसका तो यही आशय है। अतएव, यह असल में सम्प्रदायों के पृथक्करण की योजना नहीं है। यह तो लोगों में समझौता कराने की योजना है। जैसा कि मैं कह चुका हूं, लोगों का एक वर्ग दूसरे वर्ग के पास जायेगा, अल्पसंख्यक जाति अपने प्रतिनिधियों के द्वारा बहुसंख्यकों के पास जायेगी, सरकार और संसद के पास जायेगी। अतएव, इससे वास्तव में लोगों में सामंजस्य होता है पार्थक्य नहीं। मान लीजिये, आप जनसमूहों में इस अन्तर को मिटाना चाहते हैं, तो मैं सर्वप्रथम आपसे पूछता हूं कि क्या यह अपेक्षित है जैसा कि मैं कह चुका हूं, एकता का अर्थ सब लोगों का कठोर समन्वय नहीं है। यदि विद्यमान अल्पसंख्यक तथा उनके अन्तर समाप्त हो जायेंगे, तो लोगों में अन्य प्रकार के अन्तर तथा अन्य अल्पसंख्यक दिखाई देने लगेंगे। मानव जाति का यह स्वभाव है। हमें ऐसे अन्तर का अतीव समुचित उपाय से मुकाबला करना है और उन्हें ठीक करना है और अत्यन्त समुचित उपाय यही है कि सम्बद्ध लोगों को संतोष और तुष्टि प्रदान की जायें, हां, समुचित सीमाओं तथा हदों में ही यह होगा। अतएव मैं कहता हूं कि ऐसे अन्तरों को दूर करना अपेक्षित नहीं है। यह ठीक भी नहीं है, क्योंकि यह तो बाध्य करने का मामला है यदि लोगों के एक वर्ग से कहा जाये कि वे अपनी जीवन-प्रणाली के कुछ अन्तरों का परित्याग कर दें।

[श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब]

तब, श्रीमान्, यदि यह भी मान लिया जाये कि आप ऐसे अन्तरों को मिटा देने पर हठ करते हैं, तो क्या आप उन भेदों की उपेक्षा करके उन्हें मिटा सकते हैं, क्योंकि पृथक् निर्वाचक मंडलों को हटाने का अर्थ है कि लोगों के वर्गों में जो अन्तर वर्तमान है उनकी अवहेलना कर दी जाये? श्रीमान्, नि:संदेह, उन अन्तरों के समाधान का यह उपाय नहीं है कि उनकी उपेक्षा कर दी जाये और उन्हें भूलने का प्रयत्न किया जाये। इससे लोगों में असंतोष तथा उत्पीड़न की भावना उत्पन्न होगी तथा बढ़ेगी, जो किसी के लिये हितकर नहीं है।

श्रीमान्, विधान मंडलों में अनुसूचित जातियों को स्थानों के रक्षण का संरक्षण दिया गया है और यह ठीक ही किया गया है। वे इसके योग्य हैं; वे युगों से कई कठिनाइयों तथा दमन के शिकार होते रहे हैं, इसलिये जब हम स्वतंत्रता के संसार में प्रवेश कर रहे हैं, तो यह ठीक ही है कि उन्हें भी संसार के समक्ष आने की ओर इच्छानुसार कुछ भी कहने की स्वतंत्रता दी जाये। अतएव, श्रीमान्, इस समिति ने अनुसूचित जातियों के लिये स्थान रक्षण बनाये रखने की सिफारिश करके उचित ही कार्य किया है। किन्तु बहुसंख्यक सम्प्रदाय की ओर से कहा जाता है कि वे उसी सम्प्रदाय के अंग हैं, वे उसी संस्कृति और धर्म के उपासक हैं और वे उसी मूलवंश के हैं, फिर भी, श्रीमान्, यह उचित समझा गया कि उन्हें स्थानों के रक्षण का पृथक् संरक्षण दिया जाये। श्रीमान्, जब यह न्यायपूर्ण है तो क्या अन्य सम्प्रदायों के सम्बन्ध में, जोकि बहुसंख्यक दल से स्वीकृतरूपेण भिन्न हैं, यह और भी अधिक न्यायोचित नहीं है? श्रीमान्, यह दिखाई दे सकता है कि यह कार्य प्रतिहिंसा की भावना पर आधारित है, पर कुभावना या प्रतिहिंसा की कोई भी व्यवस्था चिरस्थायी नहीं हो सकती। मैं चाहता हूं कि सभा इस पहलू पर विचार करे। मुसलमान भी अन्य सम्प्रदायों के समान इस देश में, जो कि उनकी मातृभूमि है, समन्वय, समृद्धि और सुख की धारा बहाने के लिये प्रभावी रूप में तथा कुशलता से अंशदान देना चाहते हैं और इस अभिप्राय से वे दूसरों के ही समान अवसर प्राप्त करना चाहते हैं, वे इस देश की जनता का माननीय अंग बनना चाहते हैं अन्य अंगों के समान ही माननीय अंग; वे चाहते हैं कि स्वतंत्रता के युग में उन्हें भी अपने विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता मिले। श्रीमान्, यह कहा जा सकता है कि वे उन प्रतिनिधियों के द्वारा अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं जिन्हें सब जनता ने मिलकर चुना है। मान लीजिये कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय तथा अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के बीच मतभेद हो जाता है, तो क्या बहुसंख्यकों के प्रतिनिधि अल्पसंख्यकों की भिन्न विचारधारा का प्रतिनिधित्व करेंगे, श्रीमान्? ऐसे मतभेद शायद बहुत न हों, किन्तु जब ऐसे अन्तर होते हैं वे महत्त्वपूर्ण होते हैं और यह बहुत आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण है कि उन मामलों में अल्पसंख्यक लोगों को संतोष हो।

तब श्रीमान्, वे ऐसे मामले में अपनी शिकायत कैसे पेश कर सकते हैं, यदि उनका कोई प्रतिनिधि हो ही नहीं? तब फिर यह कह दिया जाता है कि मुसलमानों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि केवल मुसलमानों का ही प्रतिनिधित्व करेंगे, यह साम्प्रदायिक निर्वाचन हो गये, इसलिये यह सब चीज ही साम्प्रदायिकता से रंगी हुई है। यदि सम्प्रदायवाद से आपका आशय है पृथकता, अब कट्टरता तथा ऐसी कोई अन्य वस्तु, तो हां, मुसलमान यह नहीं चाहते। यदि यह कहना ही साम्प्रदायिकता है कि मैं मुसलमान हूं या मैं ईसाई हूं तो मेरे पास

इसका कोई इलाज नहीं है। किसी सम्प्रदाय के पास इसका क्या इलाज है कि वह मुसलमान सम्प्रदाय है या ईसाई सम्प्रदाय है? अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के लिये सदा बहुसंख्यक जाति की अप्रसन्नता या आलोचना सहना कोई खेल नहीं है। वे भी उतना ही शान्ति से रहना चाहते हैं, जितना कि जनता का कोई वर्ग चाहता हो, किन्तु फिर वे इस संरक्षण पद्धति पर, और पृथक् निर्वाचक मंडलों की पद्धति पर तथा स्थानों के रक्षण पर क्यों हठ ठानते हैं क्यों वे जानते हैं कि केवल इसी प्रकार वे अन्य लोगों के पास जा सकते हैं, वास्तव में उनके पास पहुंच सकते हैं और इस प्रकार उस सामंजस्य को स्थापित कर सकते हैं, जिसके लिये वे प्रतिज्ञाबद्ध हैं। इसी कारण से मुस्लिम तथा अन्य अल्पसंख्यक यह व्यवस्था चाहते हैं जिनका मैं समर्थन कर रहा हूं; और इसलिये यह केवल उचित ही है कि जहां उनके अन्तरों का सम्बन्ध है, उन्हें अपने विचारों को व्यक्त करने का उपकरण, अवसर अवश्य मिलना चाहिये। तब, इसका यह आशय नहीं है कि अन्य मामलों में, वे जनता के अन्य भागों से मिल नहीं सकते। वास्तविक आचरण में ऐसा नहीं होता। वस्तुस्थिति यह है कि इस सभा का प्रत्येक माननीय सदस्य साम्प्रदायिक आधार पर चुना गया है। हिन्दुओं के लिये मुसलमानों ने मत नहीं दिये; ईसाइयों के लिये मुस्लिमों ने मतदान नहीं किये और मुसलमान के लिये न हिन्दुओं ने मत दिये और न मुसलमानों ने ही दिये और इसलिये प्रत्येक सदस्य साम्प्रदायिक आधार पर चुना गया है। क्या इसका यह अर्थ है कि सभा के समक्ष पेश होने वाले अधिकांश मामलों में वे समस्त जनता की ओर से नहीं बोल सकते? इससे उनके मस्तिष्क पर पर्दा नहीं पड़ गया है और इससे व्यापक मामलों को निपटाने में कोई अन्तर नहीं पड़ा है, अतः यह कहना उचित या तर्कपूर्ण नहीं है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों से वास्तव में जनता के दो वर्गों में विभाजन हो जाता है। वास्तव में यही आलोचना, लोगों के अधिकार पर यही आक्रमण, संदेह और असंतोष का सृजन करता है। यदि उन्हें यह अधिकार दे दिया जाये तो वे संतुष्ट हो जाते हैं, वे ठीक पथ पर चलते हैं और वे अन्य लोगों से सहयोग करते हैं और देश में समन्वय रहता है। यह अधिकार बहुत लम्बे समय से उन्हें मिला हुआ है, उसी समय से जब इस देश में सर्वप्रथम संसदीय नियम लागू किये गये थे। अतएव मैं कहता हूं कि पृथक् निर्वाचक-मंडल झगड़ा पैदा करने के स्थान पर, वास्तव में लोगों में सामंजस्य स्थापित करने का साधन उपकरण है। इससे आप, इससे सरकार यह जान सकती है कि विविध वर्गों के लोगों के महत्त्व क्या हैं और फिर आप उन शिकायतों और उन झगड़ों का उपचार कर सकते हैं। यदि हम उनकी नहीं सुनते, यदि आप नहीं जानते कि उनके असंतोष की जड़ में क्या है तो ऐसे मामले में आप समुचित उपचार नहीं कर सकते। अतः यह तो वास्तव में लोगों से सहयोग और एकता को पक्का करने का साधन है।

प्रतिवेदन की दूसरी बात है: इसमें लिखा है:

> ''यद्यपि पृथक् निर्वाचक मंडलों की समाप्ति से राजनीति में से बहुत-सा विष निकल गया था...''

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): क्या वक्ताओं के लिये कोई समय की सीमा है? हमें आज वाद-विवाद अवश्य समाप्त करना चाहिये। यदि एक ही सदस्य को आधे घंटे से अधिक समय दिया जाता है, तो और बहुत से सदस्य हैं जो बोलने के लिये आतुर हैं।

***अध्यक्ष:** क्योंकि यह प्रमुख संशोधन है, अत: मैंने वक्ता को रोका नहीं है। मुझे आशा है कि सदस्य घड़ी पर भी नजर रखेंगे।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब:** शायद यह अन्तिम अवसर है कि मैं इस महत्त्वपूर्ण और आवश्यक प्रश्न पर अल्पसंख्यकों की ओर से बोल रहा हूं। अतएव...

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अन्य सदस्य भी हैं जो कि बोलने के लिये आतुर हैं। ये तो पहले ही बहुत समय ले चुके हैं। (*बाधायें*)।

***एक माननीय सदस्य:** उन्हें अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिये समय मिलना चाहिये। (*बाधायें*)।

***अध्यक्ष:** इसीलिये मैंने यह समय दिया है...

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब:** आपने मुझे जो छूट दी है उसके लिये आपका कृतज्ञ हूं। ऐसे विषय के लिये दो घंटे भी ज्यादा नहीं होंगे।

मैं प्रतिवेदन में से एक और कथन का उद्धरण दे रहा हूं:

> ''यद्यपि पृथक् निर्वाचक मंडलों को समाप्ति से राजनीति में से बहुत-सा विष निकल गया था, फिर भी धार्मिक सम्प्रदायों के लिये स्थानों के रक्षण से, यह अनुभव किया गया, कुछ हद तक पार्थक्य उत्पन्न होता है...''

श्रीमान्, पृथक् निर्वाचक मंडलों को समाप्त किया गया है। हम अभी तक पृथक् निर्वाचक मंडलों के अंतर्गत हैं। जैसा कि मैं कह चुका हूं, यहां हम सब सदस्य पृथक् निर्वाचक मंडलों के अधीन चुने गये हैं। संविधान के मसौदे में स्थानों के रक्षण की जो चर्चा है वह अभी तक लागू नहीं हुई है। मैं नहीं जानता कि प्रतिवेदन में यह कैसे लिखा है कि इससे बहुत सा विषय निकल गया है और स्थानों के रक्षण से किसी हद तक पार्थक्य कैसे होता है। स्पष्ट है कि उनका यह आशय है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों की समाप्ति के ज्ञान से कुछ विष कम हो गया है। यहां भी, यह कठोर शब्द हैं। जैसा कि मैं कह चुका हूं, कठोर शब्दों से कुछ भी सिद्ध नहीं होता और वे युक्तियों का स्थान नहीं ले सकते। यही मैं निवेदन करना चाहता हूं। जैसे कि मैं सिद्ध कर चुका हूं, पृथक् निर्वाचन मंडलों से लोगों में समन्वय और संतोष पैदा हो रहा है और इससे लोग देश में सुख, समृद्धि और एकता में अंशदान करने के योग्य बनते हैं। लोगों को यह ज्ञात है ही कि पृथक् निर्वाचक मंडलों को समाप्त किया जा रहा है। फिर भी लोगों ने धैर्य और शान्ति रखी है। क्यों? क्योंकि लोगों को भरोसा है कि यह महान् सभा अब भी इस प्रश्न पर पुनर्विचार करेगी और उनके साथ न्याय करेगी। किन्तु वह वातावरण उस प्रकार उत्पन्न नहीं हुआ है जैसा कि प्रतिवेदन में सुझाया गया है। जैसा कि मैंने कहा है कि झगड़ा पृथक् निर्वाचक मंडलों या किसी अन्य रक्षा कवच के कारण नहीं है। सद्भावना तो उस संतोष के फलस्वरूप है जो लोगों के विचारों और भावनाओं के प्रति दिखाये गये सम्मान से उत्पन्न हुआ है।

श्रीमान्, मैं इस मामले पर कोई विवाद नहीं उठाना चाहता। मैं तो शान्तिप्रिय व्यक्ति हूं और सदा शान्ति और समन्वय के लिये ही प्रयत्नशील रहा हूं। इसे विभिन्न लोगों ने स्वीकार किया है। इस विषय में मैं अपने सम्प्रदाय के गुणों का ही प्रतिबिम्ब हूं। मेरा सम्प्रदाय देश में शान्ति और समृद्धि चाहता है; वह देश में समन्वय चाहता है। इसी विचार से, श्रीमान्, मैं अपने सम्प्रदाय की ओर से कहता हूं और मांग करता हूं कि उन्हें विधान मंडलों और सरकार के समक्ष अपनी शिकायतें पेश करने का मूलाधिकार मिलना चाहिये जिससे कि वे इस देश के सुख, शक्ति और सम्मान के लिये अपना अधिकतम अंशदान कर सकें, जोकि उनकी भी मातृभूमि, इतनी हद तक ही है जितने हद तक कि दूसरों की हूं।

श्रीमान्, मैं संशोधन पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री लारी। मुझे आशा है कि श्री लारी संक्षेप में बोलने के लिये सदस्यों द्वारा दिये गये सुझाव का ध्यान रखेंगे।

***श्री जैड.एच. लारीः** रखूंगा, श्रीमान्।

अध्यक्ष महोदय, अल्पसंख्यकों सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति द्वारा नियुक्त विशिष्ट उपसमिति के निर्णय से मैं अपनी क्षुद्र सहमति अभिव्यक्त करता हूं। उसके ही शब्दों में कहा जा सकता है कि वह निर्णय ऐसा है कि 'संविधान में ऐसा कोई उपबंध नहीं होना चाहिये जिसका प्रभाव यह हो कि लोगों का कोई वर्ग सार्वजनिक जीवन की मुख्य धारा से अलग हो जाये'। मैं मानता हूं कि अल्पसंख्यकों को राष्ट्र का अभिन्न अंग बनने का प्रयत्न करना चाहिये।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): माननीय सदस्य ने अपना संशोधन पेश नहीं किया है।

***श्री जैड.एच. लारीः** सांसदिक व्यवहार को जानता हूं। मैं इसे पेश करूंगा धैर्य रखिये। अल्पसंख्यकों को ऐसे संरक्षण मांगने चाहियें, जो इस इच्छा से संगत हों और जिनका उद्देश्य यह हो कि उन्हें देश के शासन में सम्मानपूर्ण स्थान मिले, पृथक् उदासीन वर्ग के रूप में नहीं, वरन् समस्त जीवित राष्ट्र के अंग के रूप में। मैं अब इससे संतुष्ट नहीं हूं कि कुछ मामलों में मुस्लिम वकीलों को भेज दिया जाये। मेरी यह इच्छा है कि मेरे प्रतिनिधि की, चाहे वह मुस्लिम हो या हिन्दू, देश के शासन में प्रभावी आवाज हो। मामले को उस दृष्टिकोण से देखते हुए, मैं पृथक् निर्वाचक मंडलों के बिल्कुल विरुद्ध हूं और मैं विधान मंडलों में स्थानों के रक्षण का पक्षपाती नहीं हूं। पहली बात तो बिल्कुल खतरनाक है और दूसरी प्रभावहीन है और उसमें पार्थक्य की कालिमा है। किन्तु मैं नकारात्मक उपायों से संतुष्ट नहीं हूं। यह कहना पर्याप्त नहीं है कि रक्षण समाप्त होने चाहिये, यह संकीर्णता है, पृथक् निर्वाचक मंडल बुरे हैं। अल्पसंख्यकों के राजनीतिक अधिकारों को समुचित मान्यता देने के लिये क्रियात्मक उपाय होने चाहियें। मैं चाहता हूं कि यह माननीय सदन इस प्रश्न पर उन कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए विचार करे जो स्विटजरलैंड अथवा आयरलैंड जैसे ऐहिक जनतंत्रात्मक राज्यों में अल्पसंख्यकों के लिये उत्पन्न हुई थीं और वहां जो उपचार

[श्री जैड.एच. लारी]

खोजे गये और ढूंढ निकाले गये उन पर विचार करे। यही कारण है कि मैं यह प्रस्ताव करता हूं, श्रीमान्, और श्री तजम्मुल हुसैन अब संतुष्ट हो जायेंगे:

> ''कि प्रस्ताव की द्वितीय कण्डिका की उप-कण्डिका (1) में 'the provisions of' इन शब्दों के पश्चात् 'article 67 and' शब्द रख दिये जायें।
>
> कि प्रस्ताव की दूसरी कण्डिका की उप-कण्डिका (1) में, 'in the said report' इन शब्दों के पश्चात् 'with the addition that elections be held under the system of cumulative votes in multi-member constituencies and the modification that no seats be reserved for the Scheduled Castes' ये शब्द जोड़ दिये जायें।
>
> कि प्रस्ताव की दूसरी कण्डिका की उप-कण्डिका (2) हटा दी जाये।''

मेरे संशोधन का यही आशय है कि बहु-सदस्य निर्वाचन क्षेत्र होने चाहियें, दो, तीन या चार क्षेत्र हो सकते हैं, जो भी संसद निश्चित करे। इसका परिणाम यह होगा कि अल्पसंख्यकों को अपने मत का वर्गीकरण करने का अधिकार दिया जायेगा। सभा के एक विभाग की युक्तियों को समाप्त करने के लिये, यद्यपि वह बहुत छोटा वर्ग है, मैं कह सकता हूं कि यह हल जोकि मैंने पेश किया है, मुस्लिम लीग का संमिश्रण नहीं है, यह हल 1853 में सोचा गया था जबकि श्री मार्शल ने जोहन रसल के नाम एक खुली चिट्ठी 'अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक, उनके सम्बन्धित अधिकार' में इसका समर्थन किया था।

अल्पसंख्यकों को समस्या भारत में ही नई नहीं है। सब देशों में सब कालों में अल्पसंख्यक थे और उन्हें दु:ख उठाना पड़ा था। एक लेखक ने शेक्सपीयर का अनुकूलन करते हुए यह सूत्र गढ़ा था 'अल्पसंख्यकों को तो दु:ख उठाना ही पड़ेगा यह तो उनकी जाति का चिन्ह है'। किन्तु मेरे विचार में यही ऊपरी बात है। यह गूढ़ सत्य नहीं है। मुझे तो यह दीखता है कि अल्पसंख्यकों के प्रति न्याय जनतंत्र का आधार है। कारण यह है। जनतंत्र के दो सिद्धांत यह हैं, पहला कि अन्तत: बहुसंख्यकों को ही शासन करना है और दूसरा, कि प्रत्येक व्यक्ति का यह अधिकार है कि वह प्रतिनिधि-संस्था में अपने प्रतिनिधि भेज सके और इस प्रकार उस सरकार के चुनाव में जिसके प्रति वह निष्ठा रखता है उसका कुछ भाग हो। जिन्होंने मिल साहब के लेखों को पढ़ा है वे जनतंत्र के मूलाधिकारों के विषय में उनकी युक्तियों से प्रभावित हुए होंगे, कि किसी सभा में प्रत्येक राजनैतिक विचारधारा का प्रतिनिधित्व देश में उस विचारधारा के समर्थकों की संख्या के अनुपात से होना चाहिये। और यही स्वाभाविक है। यह सभा यहां किस लिये है? यहां सारे तीस करोड़ आदमी आकर आपस में विचार नहीं कर सकते। अतएव प्रतिनिधियों के भेजने की प्रणाली है। किन्तु यदि आप ऐसा उपाय अपनायें जिससे कि केवल 51 प्रतिशत लोगों को ही विधान मंडल में प्रतिनिधित्व मिले, तो वह राष्ट्र का प्रतिबिम्ब नहीं रहता। अब प्रश्न यह है कि क्या इस सदन द्वारा स्वीकृत प्रतिनिधित्व के उपाय से जनतंत्र के सिद्धांत प्रभावशील हो जाते हैं या क्रियान्वित होते हैं। आरम्भ में ही, श्रीमान्, आपको अनुमति से मैं लार्ड एक्टेन का लेख पढ़ देता हूं। उन्होंने लिखा है:

''जनतंत्रवाद की एक व्यापक बुराई बहुसंख्यकों का अत्याचार है, जो कि निर्वाचन जीतने में बल प्रयोग से या धोखे से सफल हो जाते हैं। उस चीज को समाप्त कर देना ही जोखम को टालना है। प्रतिनिधित्व की व्यापक पद्धति से यह जोखम चिरस्थायी हो जाती है। समान निर्वाचक मंडलों से अल्पसंख्यकों को प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाता। पैंतीस वर्ष पूर्व यह कहा गया था कि इसका इलाज आनुपातिक प्रतिनिधित्व है। यह बिल्कुल लोकतंत्रात्मक है, क्योंकि इससे उन सहस्त्रों मतदाताओं का प्रभाव बढ़ जाता है, जिनकी अन्यथा शासन में कोई आवाज नहीं होती और इससे अधिक व्यक्ति समानता के समीप आ जाते हैं, क्योंकि ऐसा उपाय किया जाता है कि कोई मत बेकार नहीं जायेगा तथा प्रत्येक मतदाता संसद में अपने विचार के एक सदस्य को स्थान दिलाने में अंशदान करता है।''

अत: यही हल मैं इस सदन के समक्ष रख रहा हूं। यह सदन जानता है कि इस समय देहातों में तीन राजनीतिक दल हैं—कांग्रेस, समाजवादी और साम्यवादी। उनमें से दो ने इसी प्रणाली को प्रतिनिधित्व की समुचित पद्धति स्वीकार कर लिया है। 1947 के अक्तूबर की 15 तारीख को समाजवादी दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने एक प्रस्ताव स्वीकार किया था, जिसमें लिखा है—मैं इसका उद्धरण देने के लिये क्षमा चाहता हूं:

''समस्त निर्वाचन सीधे, गुप्त तथा वयस्क मताधिकार द्वारा संयुक्त निर्वाचक मंडलों की पद्धति से होना चाहिये। बहु-सदस्य निर्वाचन क्षेत्र होने चाहिये तथा सामूहिक मतों की पद्धति के अनुसार मतदान होना चाहिये, जिससे कि अल्पसंख्यकों को प्रतिनिधित्व मिल सके।''

लगभग उन्हीं दिनों 'जनयुग' में इस प्रतिनिधित्व के बारे में लेख था और लेखक ने यों लिखा था:

''वयस्क मताधिकार तथा संयुक्त निर्वाचक मंडलों की स्थापना का सब ओर स्वागत किया जायेगा क्योंकि उससे उपयुक्त लोकतंत्रात्मक हल का आधार बन जायेगा। अब समन्वयित लोकतंत्रात्मक कार्यक्रम के लिये संयुक्त प्रयत्नों के लिये लोगों के समन्वयित हितों के आधार पर ही हमें लोगों से अपील करनी चाहिये। पर यह प्रश्न फिर भी शेष रहता है कि प्रतिनिधित्व की ऐसी पद्धति कैसे आविष्कृत की जाये जिससे कि अल्पसंख्यक ऐसे प्रतिनिधि चुन सकें, जिनमें उन्हें विश्वास हो और फिर भी जिससे पार्थक्य उत्पन्न न हो।''

और फिर उसमें लिखा है:

''इसका सर्वोत्तम, सर्वाधिक लोकतंत्रात्मक और असाम्प्रदायिक तरीका आनुपातिक प्रतिनिधित्व है, निर्वाचक मंडलों की यह पद्धति यूगोस्वालिया जैसे नये जनतंत्रों में तथा कई पुरानों में भी प्रचलित है। इसमें साम्प्रदायिक रक्षणों की कोई आवश्यकता नहीं होगी।''

अब, श्रीमान्, मेरे विचार में सदन सांवैधानिक दृष्टान्तों की तीन पुस्तकों को नहीं भूला होगा, जो इस संविधान सभा ने श्री राव योग्य नियंत्रण में तैयार की थीं। उनमें अल्पसंख्यकों के लिये प्रतिनिधित्व के समुचित उपाय पर विचार किया गया है। मुझे आशा है कि सदन

[श्री जैड.एच. लारी]

इन पुस्तकों को न भूला होगा। यदि आप प्रथम भाग के 17 पृष्ठ को देखें, तो लेखक ने या संग्रहकर्ता ने लिखा है:

> ''अल्पसंख्यकों के अधिकारों तथा हितों का बहुत अचछा सरंक्षण आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा निर्वाचन की पद्धति है।''

मुझे आशा है कि उन स्थानों पर बैठे हुये एक वाधाकर्ता सदस्य को संतोष हो जायेगा कि वह साम्यवादी या समाजवादी नहीं है। इन मामले पर अन्य पुस्तक, तीसरे ग्रंथ में, पृष्ठ 164 पर पूरा विवरण है। संग्रहकर्त्ता लिखता है:

> ''किन्तु आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आलोचक सब सहमत हैं कि ऐसे देशों में, जहां अर्थ जागृत, मूलवंशीय या साम्प्रदायिक अल्पसंख्यक हैं, इस पद्धति का लागू करना अपेक्षित है।''

आप देखेंगे कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को उन लोगों ने स्वीकार किया है, जिन पर निरपेक्ष भावना से अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व के उपाय ढूंढने का कार्यभार रखा गया था और उन्हें बड़े राजनैतिक दलों ने स्वीकार कर लिया है, जिनमें से एक के भविष्य में शक्ति आरूढ़ होने की सम्भावना है।

यदि यह पर्याप्त नहीं है तो आप अन्य देशों के अनुभव को देख सकते हैं। हम बिल्कुल कोरे कागज पर संविधान का निर्माण नहीं कर रहे हैं। पहले भी संविधान बन चुके हैं, पहले भी कठिनाइयां उपस्थित हुई हैं और पहले भी अल्पसंख्यक थे। अधिकतम मिलता-जुलता उदाहरण आयरलैंड का है। क्या मैं सदन से कहूं कि वह इस बात का ध्यान रखे कि आयरलैंड में दो धर्म हैं—प्रोटेस्टैंट और केथोलिक—जो परस्पर विरोधी हैं। आयरलैंड का भी धार्मिक अल्पसंख्यकों के आंदोलन के फलस्वरूप विभाजन किया गया था, जिसका परिणाम यह है कि आयरलैंड में दो राज्य हैं। आरम्भ में इन दोनों देशों ने आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति रखी थी, बाद में उत्तरी आयरलैंड ने उसे छोड़ दिया और प्रधान आयर में वह अब भी जारी है। अब वहां क्या स्थिति है? एक लेख ने स्थिति को संक्षेप में यों लिखा है:

> ''दक्षिणी आयरलैंड में धर्म का प्रश्न अब राजनीति की विभाजन रेखा नहीं रह गया है।''

आयरलैंड के उस भाग में, जहां आनुपातिक प्रतिनिधित्व है, लेखक कहता है कि धर्म का प्रश्न अब राजनीति की विभाजन रेखा नहीं रह गया है। आगे चलकर लेखक लिखता है:

> ''धार्मिक प्रश्न, जो दक्षिणी आयरलैंड में भी इतना ही कटुतापूर्ण था जितना कि उत्तरी आयरलैंड में, अब राजनीति में अपना महत्व खो बैठा है। अब प्रोटेस्टेंट तथा कैथोलिक पार्टियां नहीं रही हैं। अलस्टर में इससे बहुत भिन्न स्थिति है। आनुपातिक

प्रतिनिधित्व वहां भी अपना शांति का उपयोगी कार्य कर रहा था। कैथोलिक और नेशनलिस्ट वहां अल्पसंख्यकों में थे, किन्तु उनको उचित प्रतिनिधित्व मिला हुआ था और कोई शिकायत की भावना नहीं थी। कैथोलिकों को कई ऐसे क्षेत्रों में भी कुछ प्रतिनिधित्व मिला हुआ था, जहां प्रोटेस्टेंटों की बहुलता है और इसके विपरीत स्थिति भी थी। आनुपातिक प्रतिनिधित्व की समाप्ति से कटुता फैल गई जो अब भी वहां विद्यमान है।''

यह देश के एक भाग में आनुपातिक प्रतिनिधित्व की उपस्थिति और दूसरे भाग में उसकी अनुपस्थिति का सत्य अनुभव है।

मुझे विश्वास है कि सदन के वे सदस्य जो आज की राजनीति से अवगत रहना चाहते हैं 'राउण्ड टेबल' को पढ़ते होंगे। उसके मार्च 1948 के अंक में आयरलैंड में आनुपातिक प्रतिनिधित्व की उपयुक्तता पर या अनुपयुक्तता पर विचार करते हुये, लेखक लिखता है:

''जादू वही है जो सिर पर चढ़कर बोले और इस निर्वाचन प्रणाली से प्रत्येक वर्ग को अपना प्रतिनिधित्व बनाये रखने में ही सहायता नहीं मिली है, वरन् इससे हमें स्थिर शासन प्राप्त हुआ है। इसने अल्पसंख्यकों के प्रति न्याय तथा बहुसंख्यकों के शासन करने के अधिकार में सामंजस्य स्थापित करने की जटिल समस्या का यथासम्भव समाधान कर दिया है।''

यहां आपके पास ऐसे देश का उदाहरण है, जहां ऐसी ही परिस्थितियां थीं, जहां आंदोलन के फलस्वरूप विभाजन हुआ, जहां एक भाग में आनुपातिक प्रतिनिधित्व को लागू रखने का प्रयास किया गया तथा दूसरे भाग में उसका परित्याग कर दिया गया। क्या हमारे लिये यह बुद्धिमानी नहीं होगी कि हम उस अनुभव से लाभ उठायें जो हमारे देश के समान ही है?

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** दक्षिणी आयरलैंड की जनसंख्या क्या है?

***श्री जैड.एच. लारी:** आपको जनसंख्या से मतलब है या सिद्धांत से? आप आसानी से वार्षिकी (ईयर बुक) को देखकर जनसंख्या का पता लगा सकते हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): क्या आप यह कहते हैं कि अब आयरलैंड में सामूहिक मतदान पद्धति है?

***श्री जैड.एच. लारी:** हां, वहां आनुपातिक प्रतिनिधित्व है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** आयरलैंड के संविधान के अनुसार कोई मतदाता एक से अधिक मत नहीं दे सकता और मतदान गूढ़शलाका-पद्धति द्वारा होता है।

***श्री जैड.एच. लारी:** आप किस वर्ष की चर्चा कर रहे हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** 1937।

***श्री जैड.एच. लारी:** यह अशुद्ध है। आप फिर पढ़िये और मैं जो कुछ कहता हूं वही आपको मिल जायेगा। 'राउंड टेबल' में इस पर पूरा विचार किया गया है। कृपया उसे पढ़िये।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** आपको जो संवैधानिक दृष्टान्तों की पुस्तकें दी गई हैं, उन्हें पढ़िये।

***श्री जैड.एच. लारी:** स्विट्जरलैंड में भी यही बात हुई थी। सदन को पता है कि केण्टन को तीन निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित कर दिया गया था। एक मुख्यत: प्रोटेस्टेण्ट था और दूसरा मुख्यत: कैथोलिक। परिणाम यह हुआ कि एक भाग में कैथोलिकों को प्रतिनिधित्व नहीं मिला तथा दूसरे में प्रोटेस्टेण्टों को प्रतिनिधित्व नहीं मिला। आनुपातिक प्रतिनिधित्व लागू किया गया। सबको पता है कि आज स्विट्जरलैंड सुदृढ़, लोकतंत्रात्मक तथा लौकिक सुखी परिवार है।

यही बात बेल्जियम में हुई। मैं एक अन्य लेख का उद्धरण दे सकता हूं। वह कहता है:

> ''बेल्जियम में अल्पसंख्यकों को प्रतिनिधित्व न मिलने से फ्लैण्डर्स और वेलोनी के मध्य मूलवंशीय, भाषा सम्बन्धी तथा धर्म सम्बन्धी अन्तर बढ़ गये। फ्लैण्डर्स का प्रतिनिधत्व केवल कैथोलिकों द्वारा होता था, फ्रांसीसी भाषा-भाषी जिलों का प्रतिनिधित्व उदारदल तथा समाजवादियों के द्वारा होता था। आनुपातिक प्रतिनिधित्व से दोनों क्षेत्रों से इन सब दलों के सदस्य चुने गये और इसके परिणामस्वरूप बेल्जियम का राजनैतिक एकीकरण हो गया।''

जनतंत्र के सिद्धांत के अनुसार किसी अल्पसंख्यक को मताधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिये, चाहे वे अल्पसंख्यक राजनैतिक हों, धार्मिक हों अथवा सामाजिक हों। यदि आप तर्क से देखें तो आपको पता चलेगा कि जहां 51 प्रतिशत के सामान्य बहुमत से चुनाव होता है, वहां 49 प्रतिशत प्रतिनिधित्वहीन रह जाते हैं। यदि आप यथार्थवाद पर विचार करें तो आप इस बात की आवश्यकता अनुभव करेंगे कि निर्वाचनों की ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि जनता के प्रत्येक वर्ग को प्रतिनिधित्व मिल जाये और यदि आप अनुभव से लाभ उठाना चाहें तो आप देखेंगे कि जिन देशों में यह समस्या उठी, वहां उन्हें एक ही हल मिला कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व हो। मैं तो और भी आगे बढ़कर यह कहूंगा कि इस प्रणाली को मान लेना राष्ट्रीय हित में है और यह तीन कारणों से ऐसा है।

1. संसद राष्ट्र के मस्तिष्क का दर्पण होनी चाहिये, अन्यथा उसे यथेष्ट सम्मान नहीं मिलेगा। ऐसे उदाहरण हैं, जहां कि अल्पसंख्यक सदन के सदस्यों का बहुमत चुनने में सफल हो गये हैं, जहां निर्वाचन से एक भाग पूर्णत: मताधिकार से वंचित हो गया। मैं युक्तप्रान्त के अर्वाचीन निर्वाचनों को लेता हूं जहां समाजवादियों को 11 निर्वाचन क्षेत्रों को लगभग 35 प्रतिशत मत मिले थे, किन्तु उनका एक भी प्रतिनिधि नहीं चुना गया। जहां तक जनता का सम्बन्ध है, यह निश्चय से कहा जा सकता है कि 35 प्रतिशत लोग समाजवादी

दल के पीछे थे, किन्तु निर्वाचन की पद्धति ऐसी थी कि उस दल को बिल्कुल भी प्रतिनिधित्व नहीं मिला उस हद तक सदन की मान्यता कम हो गई और उस हद तक वह उस राष्ट्र का प्रतिनिधि नहीं रहा, जिसका प्रतिनिधित्व वह करना चाहता है।

2. किसी अल्पसंख्यक को कोई शिकायत नहीं रहेगी। मैं उनमें से नहीं हूं जो यह विश्वास करते हैं कि अल्पसंख्यकों की समस्त कल्पित शिकायतें पूरी होनी चाहियें। वे युक्तियुक्त होनी चाहिये। उनके हितों का उस हद तक ध्यान रखा जा सकता है जिस हद तक कि वे राष्ट्रीय हितों से संगत हो। ज्यों ही उनके हितों और राष्ट्र के हितों में विरोध हो, अल्पसंख्यकों को कुएं में जाना होगा। किन्तु जहां राष्ट्रीय हित सुरक्षित हो अथवा जोखम में या खतरे में न हो, वहां अल्पसंख्यकों से परामर्श लेना अपेक्षित हो। यदि आप ऐसा करें तो इससे अवश्यमेव राज्य का एकीकरण होगा। अत: आनुपातिक प्रतिनिधित्व का दूसरा लाभ यह है कि इससे राज्य का एकीकरण होगा।

3. यदि आप आनुपातिक प्रतिनिधित्व को मान लें तो सदन में विरोधी दल भी बन जायेगा। साम्प्रदायिक आधार पर दल नहीं बनेगा, वरन् महान् राष्ट्रीय प्रश्नों पर आधारित दल बनेगा। इससे ऐसा एक दल बन जायेगा जो आप से सहयोग करेगा, जहां तक कि राज्य की अखंडता का प्रश्न है, जहां तक कि राष्ट्र के सम्मान को बढ़ाने का प्रश्न है। साथ ही वह आपकी त्रुटियों को दूर करेगा तथा आपको ठीक मार्ग पर रखेगा। ज्यों ही आप निर्वाचन करेंगे, आपके सदन में एक विरोधी दल बन जायेगा, जो राष्ट्र की प्रतिष्ठा के विषय में जागरूक होगा, जो राष्ट्र के हितों की रक्षा की आवश्यकता के विषय में होगा और साथ ही नई ससंद में बहुसंख्यकों को सुधारने का कार्य करेगा। अत: मैं कहता हूं कि मैंने जो हल पेश किया है, वही एकमात्र हल है—जैसा कि मैं कह चुका हूं, यह मेरा अपना हल नहीं है, वरन् युगातीत हल है जिस पर कई देशों में आचरण किया गया है।

अब क्या आपत्ति है? आप इसे क्यों स्वीकार नहीं करते? प्रत्येक सदस्य जानता ही है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के विविध प्रकार हैं: एक तो एकल संक्राम्य मत है, सामूहिक मत होता है और सूची पद्धति होती है। मैंने सामूहिक मतदान के रूप में आनुपातिक प्रतिनिधित्व का सुझाव रखा है। अच्छा, यह कहा जा सकता है कि यह भी पृथक् निर्वाचक मंडलों का प्रकारान्तर ही है, इसे मान लेना पृथक् निर्वाचक मंडलों को मानना ही है। जब मैंने युक्तप्रांतीय विधान मंडल में इसे रखा तो यही आलोचना की गई थी। किन्तु आप भूलते हैं कि 1937 से स्थिति बदल गई है। युक्तप्रान्त को ही लीजिये जहां कि मुस्लिम बहुलता से हैं। आपको पता है कि वहां 80 लाख मुस्लिम हैं, पर उनका अनुपात केवल ग्यारह-बारह प्रतिशत है। यदि आप त्रि-सदस्य निर्वाचन क्षेत्र रखें, तो 33 प्रतिशत मत प्राप्त किये बिना कोई सदस्य निर्वाचित नहीं हो सकता।

अतएव यह आलोचना कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रकारान्तर से पृथक् निर्वाचन ही है, बहुत अनुदार है। वस्तुस्थिति यह है कि मैं पृथक् निर्वाचक मंडल द्वारा निर्वाचित होकर आया हूं। मैं अपने सम्प्रदाय की क्या सेवा करता हूं? नि:संदेह मैं यहां आता हूं और कुछ

[श्री जैड.एच. लारी]

विचार का समर्थन करता हूं, किन्तु क्या विचार प्रकट कर देने मात्र से ही मेरे सम्प्रदाय को कुछ लाभ होता है? (**एक माननीय सदस्यः** होता है) नहीं होता। इससे तो मेरे वहां के मित्रों को मेरे विरुद्ध लोगों को और भी अधिक कटु बनाने का अवसर मिलता है और वे कहते हैं कि श्री लारी ने यह प्रश्न इसलिये उठाया है कि इससे उनके सम्प्रदाय का लाभ है। किन्तु मैं एक प्रतिनिधि चाहता हूं, चाहे वह मौलाना आजाद की जगह कोई सरदार क्यों न हो, किन्तु मुझे यह अनुभव होना चाहिये कि उस सरकार के निर्वाचन में मेरा हाथ हो और उसे मेरी भावनाओं का आदर करना होगा, क्योंकि उसे फिर मेरे से मत लेने के लिये मेरे पास आना होगा।

किन्तु युक्तप्रान्त का मामला लीजिये। 10 प्रतिशत मुसलमानों की सुगमता से उपेक्षा की जा सकती है। किसी पद्धति का परीक्षण संकटकाल में ही होता है, जबकि आवेश बढ़ जाता है। उस समय नहीं, जबकि सुगमता से कार्य चल रहा हो। अतः मेरा निवेदन है कि आपको इस प्रश्न पर शान्ति से विचार करना चाहिये कि स्थानों के रक्षण के अतिरिक्त, पृथक् निर्वाचक मंडलों के अतिरिक्त, क्या कोई ऐसा उपाय है जिससे अल्पसंख्यकों को—चाहे वे राजनैतिक हों, सामाजिक हों या धार्मिक हों—समुचित अधिकार मिल सकते हैं।

हमने जो कुछ किया है उसमें समझौते की भावना का ही आभास रहा है। अभी उस दिन लन्दन निर्णय को स्वीकार करते हुये आपने बादशाह को कड़ी के रूप में स्वीकार कर लिया। उस बादशाह को जिसे आप पहले साम्राज्यवाद और हमारे अधिकारों के दमन का प्रतीक मानते थे। इससे पता लगता है कि आप कितने उदार हैं। क्या फिर आपको वही उदारता नहीं दिखानी चाहिये, जबकि आप अपने ही एक वर्ग के विषय में निर्णय कर रहे हैं, जिसके विषय में आप मान चुके हैं कि उसे राष्ट्र का अभिन्न भाग ही मानना पड़ेगा? यदि ऐसा सम्भव हो तो आप मेरी भावनाओं को ही तसल्ली देने का प्रयत्न क्यों नहीं करते? जैसा कि मैं कह चुका हूं, राष्ट्रीय हित ही सर्वोपरि होने चाहिये। यदि यह बताया जा सके कि इस उपाय से राष्ट्रीय हितों का अनुसेवन नहीं हो सकता या वे जोखम में हैं, तो मैं पहला व्यक्ति हूं जो उन्हें छोड़ने के लिये तैयार हो जाऊंगा।

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्यप्रान्त तथा बरार : जनरल): आपने पाकिस्तान की मांग क्यों की थी?

***श्री जैड.एच. लारीः** खैर, यदि वह वैयक्तिक प्रश्न हो, तो मैं अपने माननीय मित्र को बता सकता हूं कि मैंने मुस्लिम लीग के दिल्ली अधिवेशन में पाकिस्तान के सृजन का विरोध किया था। किन्तु प्रश्न यह है: क्या यह प्रश्न अब संगत है? क्या आप पुरानी शिकायतों को ताजा नहीं कर रहे हैं? मैं आपसे न्याय की दृष्टि से पूछता हूं। आप कहते हैं कि आप मुझे राष्ट्र का अभिन्न अंग मानते हैं। किन्तु ज्यों ही आप ऐसी आपत्तियां उठाते हैं, आप सारा आडम्बर छोड़ देते हैं। आप यह दिखा देते हैं कि आप मुझे राष्ट्र का अभिन्न अंग नहीं समझते और आप पुरानी भ्रान्तियों को अब भी दिल में रखते हैं। आपने जो उदारता दिखाई है यह उससे संगत नहीं है।

मुझे विश्वास है कि उधर जो सब प्रकार की बाधायें हैं, उनके बावजूद इस सदन का हृदय बहुत साफ है, कम से कम इस देश के नेताओं का हृदय बहुत साफ है और वह हृदय यह देख लेगा कि मुसलमानों की नाड़ी कैसे चलती है।

श्री इस्माइल ने मद्रास की मुस्लिम लीग के विषय में बताया है। खैर, मैं यहां कोई विवाद करने नहीं आया हूं। किन्तु मैं यह जरूर कहूंगा कि जहां तक युक्तप्रान्तीय मुस्लिम लीग का सम्बन्ध है, लीग राजनीति में भाग नहीं लेगा और मद्रास की मुस्लिम लीग अब प्रतिनिधि नहीं रही है।

अब, श्रीमान्, यदि आप मान लें कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व को स्वीकार करना है, तो मेरा तीसरा संशोधन अनुसूचित जातियों के लिये स्थान रक्षण नहीं रहना चाहिये, इसका परिणाम मात्र है, क्योंकि एक बार आप आनुपातिक प्रतिनिधित्व स्वीकार कर लें तो किसी जाति के लिये रक्षण की गुंजाइश ही नहीं रह जाती।

किन्तु क्या मैं यहां एक क्षण के लिये रुक कर के इस विषय में कुछ शब्द कह सकता हूं? यदि आप मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व छीन लेते हैं, किन्तु साथ अनुसूचित जातियों के लिये उसे बनाये रखते हैं, तो दो प्रश्न उठते हैं। बुद्धिमान व्यक्ति के लिये चाहे इसका कोई मूल्य न हो। किन्तु भावुक लोगों के लिये उनका बहुत मूल्य है। रास्ते चलता मुसलमान स्वभावत: कहेगा, ''हूं, अनुसूचित जातियां तो हिन्दू सम्प्रदाय का भाग हैं। हिन्दुओं और उनमें कोई विरोधाभाव नहीं है। स्पष्ट है कि आप अनुसूचित जातियों को प्रतिनिधित्व देना चाहते हैं, क्योंकि आप सम्भवत: यह अनुभव करते हैं कि आप विधान मंडलों में पर्याप्त मात्रा में अनुसूचित जातियों को नहीं भेज सकेंगे। यदि निर्वाचक मंडल सर्वथा जागरूक हो, यदि निर्वाचक मंडल चेतन हो, यदि निर्वाचक मंडल उस सम्प्रदाय के प्रत्येक अंग को प्रतिनिधित्व देने की आवश्यकता से अवगत हो, तो आप यह नहीं कह सकते कि रक्षण अपेक्षित है। रक्षण से यह पता चलता है कि उस विषय में आप सबल अनुभव नहीं कर रहे। कुछ लोगों के मस्तिष्क में सन्देह है कि आप सम्भवत: सवर्ण लोगों की पक्षपात भावना को दूर करके अनुसूचित जातियों को अच्छी संख्या में प्रतिनिधित्व नहीं दे सकेंगे''। मुसलमान कहेंगे: ''आपको अनुसूचित जातियों के विषय में भी, जो कि आपके सदा अंग रहे हैं, ऐसा भरोसा नहीं है। फिर मुस्लिमों के विषय में क्या होगा, जिन पर अब भी कई जगह शंका की जाती है?'' और संशय का कारण भी है क्योंकि, जैसा आपने ठीक ही कहा है, मुस्लिम भारत का अर्थ है मुस्लिम लीगी भारत। यह सत्य है: मैं इससे इन्कार नहीं करता। आप मुस्लिमों के मन में यह ख्याल क्यों पैदा करते हैं कि इधर आपको अनुसूचित जातियों के हितों की तो चिन्ता है और आप उनके लिये प्रतिनिधित्व दे रहे हैं, पर उधर आप मुसलमानों के हितों की चिन्ता या परवाह नहीं करते और यद्यपि आप कहते हैं कि बहुसंख्यक जाति उदार रहेगी और मुस्लिमों के प्रतिनिधि भी पर्याप्त संख्या में चुनेगी, पर मुस्लिमों के लिये वैसी ही चिन्ता व्यक्त नहीं की है? हो सकता है कि आप समझते हों कि मुसलमान बहुसंख्यकों का विरोध होते हुये भी प्रतिनिधित्व प्राप्त कर सकेंगे।

माननीय सरदार पटेल को सर्वप्रथम इस बात पर विचार करना चाहिये। उन्हें उस पर मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि के साथ विचार करना चाहिये।

[श्री जैड.एच. लारी]

दूसरी बात यह है: यदि आप अनुसूचित जातियों के लिये स्थान-रक्षण द्वारा प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को स्वीकार कर लेते हैं, तो क्या आप यह भी स्वीकार नहीं कर लेते हैं कि यह रक्षण राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध नहीं है? यदि है तो इसे स्वीकार क्यों करते हैं? यदि नहीं है, तो आप यह क्यों कहते हैं कि अनुसूचित जातियों के लोगों ने मतैक्य से यह विचार प्रकट किया है कि वे रक्षण चाहते हैं? किन्तु क्या इस प्रश्न पर मुसलमानों के विचारों का पता लगाया गया था? मैं नहीं समझता कि परामर्शदातृ समिति में मुस्लिम सम्प्रदाय के जो लोग हैं, इनका देश पर कोई प्रभाव है और वे मुस्लिमों की ओर से कोई बन्धनकारी कार्य कर सकते हैं। यह दूसरी बात है कि यदि मैं परामर्शदातृ समिति में होता तो मैं भी यही राय देता, क्योंकि मैं स्थानों का रक्षण नहीं चाहता। यदि आप उस सम्प्रदाय का मत जानना चाहते थे, तो सरदार पटेल के लिये उपयुक्त तरीका यह होता कि वे अपनी अध्यक्षता में मुस्लिम सदस्यों का अधिवेशन बुलाते, उनके समक्ष सब तथ्य रखते और उनकी सम्मति मांगते। वैयक्तिक तौर पर मैं नहीं समझता कि सदन के किसी सदस्य की यह भावना होनी चाहिये कि बातूनी सदस्यों की ही चलती है और वे ही जीत जाते हैं। मैं बोलने वाला सदस्य हूं, किन्तु दूसरे सदस्य नहीं बोलते। मैं नहीं चाहता कि मेरे सहयोगी यह समझें कि मैंने उनसे राय लिये बिना और असत्य आडम्बर करके सरदार पटेल को आश्वासन दे दिया है कि यह स्थिति है। अतएव मैं कहता हूं कि दो रास्ते हैं। एक यह है कि स्थानों का रक्षण किसी के लिये भी न किया जाये। यह राष्ट्र के हित में है। किन्तु यदि आप सम्बद्ध अल्पसंख्यक जाति के विचारों के आधार पर रक्षण रखना या समाप्त करना चाहते हैं तो उस जाति के विचारों का पता लगाने के लिये समुचित कदम उठाइये। मैं अपने सहयोगियों के प्रति न्याय करने के लिये यह कहता हूं जो कि अपने विचारों को मेरे समान बलपूर्वक प्रकट नहीं कर सकते, कि ऐसा उपाय अपनाया जाये। मैं इस धारणा से चल रहा हूं कि अतीत को भुला दिया गया है। जो अतीत को भुलाना नहीं चाहते, मैं उनकी ओर ध्यान नहीं देता। मैं जानता हूं कि उनकी संख्या कम है। यदि बहुमत की यही राय होती तो इसकी अवहेलना कहने में जोखिम थी। किन्तु मैं जानता हूं, इसलिये इसी धारणा पर चलता हूं कि विगत को भुला देना चाहिये। मैं यहां पर भारतीय राष्ट्र का अभिन्न अंग बनकर आया हूं। केवल उसी हैसियत से मैं सदन में कुछ बातों का समर्थन करता हूं। बहुसंख्यकों की मर्जी है कि वह मेरी बातों को स्वीकार करें या ठुकरा दें। इतिहास ही निश्चित करेगा कि कौन ठीक था। कई बार बहुसंख्यक गलती पर होते हैं और यह आवश्यक नहीं है कि अल्पसंख्यक सदा ठीक ही मार्ग पर हों। किन्तु मेरे अन्तरतम में मुझे सन्तोष है कि मैं जो कुछ कहता हूं, वह उपयुक्त है तथा समुदाय के राष्ट्रीय हित में है। उस आधार पर मैंने इस माननीय सदन के समक्ष यह प्रस्ताव रखा है मैं देश के नेताओं से अपील करता हूं कि इस विषय पर फिर नये सिरे से विचार करें। सर्वप्रथम आपको यह विचार करना चाहिये कि क्या उनके लिये ऐसा उपाय अपनाना सम्भव नहीं है, जिस पर दूसरों ने आचरण किया है और इससे सफलता मिली है तथा राज्य का स्थायित्व जोखिम में नहीं पड़ा है। मेरे विचार में इससे सदा के लिये समस्या का समाधान हो जायेगा। हमें इस पद्धति का दस वर्ष तक अनुभव करना चाहिये। संविधान को कभी भी बदला जा सकता है। जब अल्पसंख्यक कहते हैं कि 'हमें आनुपातिक प्रतिनिधित्व रखना चाहिये' तब आप स्वीकार क्यों नहीं कर लेते?

दो निर्वाचनों के लिये इसे स्वीकार क्यों नहीं कर लेते? क्या आप भावी पीढ़ियों को बांधने जा रहे हैं? नहीं। शायद आप कहेंगे ''आप इसी पर चलकर क्यों नहीं देखते?'' यह युक्तियुक्त प्रश्न है। किन्तु मैं कह सकता हूं कि सम्भवत: उस समय मैं यहां नहीं रहूं। उसमें बहुत जोखिम है। किन्तु आप पांच वर्ष तक इस पर चलिये और यदि इससे राज्य की अखंडता जोखिम में पड़ जाये तो इसे छोड़ दीजिये। पहले आपने रक्षित स्थान रखने का निर्णय किया था। अब आप कहते हैं 'नहीं'। छ: वर्ष पश्चात् संविधान में संशोधन करने से आपको कौन रोकता है? अतएव मैं कहता हूं, न्याय करिये और उदार बनिये। (*बाधायें*)। यदि उदारता नहीं तो कम से कम न्याय अवश्य करिये। मैं बाधा पर प्रसन्न हूं। उदारता मुझे भी अपील नहीं करती। यह तो निर्धनों और दीनों की भाषा है। किन्तु न्याय तो प्रत्येक नागरिक का हक है। अत: मै कहता हूं, न्याय करिये। हमें प्रश्न पर विचार करना चाहिये तथा ऐसा करते समय स्विट्जरलैंड या अन्य देशों से तटस्थ विचारकों और राजनीतिज्ञों को भी आमंत्रित करें। इस प्रश्न पर विचार करने के लिये हम उन्हें बुलायें और यदि वे कहें कि मैं गलत हूं, तो आप जैसा चाहे करिये। किन्तु, ईश्वर के लिये मुझे अवसर दीजिये, मुस्लिम सम्प्रदाय के एक सदस्य की हैसियत से नहीं वरन् भारतीय राष्ट्र के एक सदस्य की हैसियत से। उन्हें जीवित रहने का तथा देश के बिशद हित में अपना भाग पूरा करने का अवसर दीजिये।

जहां तक पृथक् निर्वाचक मंडल के प्रश्न का सम्बन्ध है, मुझे भी मोहम्मद इस्माइल साहिब के विरोध करने का अत्यन्त असुखद कार्य करना पड़ रहा है, क्योंकि मैं सदा ही यह सोचता रहा हूं कि इस सदन में मेरा अस्तित्व व्यर्थ रहा है। पृथक् निर्वाचक मंडलों के आधार पर चुना जाने के कारण मैं केवल यही कह सकता हूं, कि मुस्लिम सम्प्रदाय क्या विशेष बात चाहता है। यदि मैं कोई ऐसी बात कहूं, जो राष्ट्र के हित में हो, तो मुझे सम्प्रदायवादी कहकर बुरा बताया जाता है। अत: मैं तो ऐसी चीज का सुझाव रख रहा हूं, जिस पर मैंने चलकर नहीं देखा है, बल्कि जिस पर दूसरे चले हैं और उसे स्वीकार किया है।

***प्रो. एन.जी. रंगा** (मद्रास : जनरल): क्या मैं जान सकता हूं, श्रीमान्, कि क्या किसी तर्क को दोहराने की अनुमति है?

***श्री जैड.एच. लारी:** मेरे मित्र को वक्तृता कला का ज्ञान नहीं है, अन्यथा वे ऐसा नहीं कहते कि कोई बात दोहराई नहीं जाती। बातें दोहराई जाती हैं किन्तु अक्षरश: नहीं। अत: मैंने कहा कि न्याय करिये और वस्तुस्थिति पर विचार करिये और तत्पश्चात् निर्णय करिये, जोकि सब सम्प्रदायों के हितों तथा राष्ट्र के लिये लाभकारी हो और हमारे राज्य की शुभकीर्ति में चार चांद लगाये।

***श्री एम. थिरुमल राव** (मद्रास : जनरल): मेरे पास आयरलैंड गणराज्य सम्बन्धी लेख की एक प्रति है। उसमें श्री लारी द्वारा दिये गये उद्धरण का एक शब्द भी नहीं है।

***अध्यक्ष:** यदि कोई सदस्य उस अंश का उद्धरण देना चाहे, तो वह ऐसा कर सकता है।

***श्री एम. थिरुमल राव:** यदि मुझे बोलने का अवसर मिलेगा, तो मैं ऐसा करूंगा।

***अध्यक्षः** माननीय सदस्य को अवसर मिले तो वे बोल सकते हैं।

अगला संशोधन संख्या 5 है, जिसकी सूचना कई सदस्यों ने दी है।

(संशोधन संख्या 5, 6, 7 और 8 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** अब एक और संशोधन श्री ठाकुरदास भार्गव का है, जिसकी मुझे सूचना मिली है। उसी संशोधन की सूचना श्री नागप्पा और श्री खांडेकर ने दी थी।

(श्री नागप्पा और पंडित ठाकुरदास भार्गव दोनों बोलने के लिये खड़े हुये।)

***अध्यक्षः** मुझे पता लगा है कि पंडित ठाकुरदास भार्गव का संशोधन पहले आया था। क्योंकि यह संशोधन पहले आया था, अतः मैं उन्हें इसको पेश करने का अवसर दूंगा। (*श्री नागप्पा को सम्बोधित करते हुये*) आपको इस पर बोलने का अवसर मिले, तो आप बोल सकेंगे।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

''कि प्रस्ताव में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

'स्थानों के रक्षण तथा नाम निर्धारणों का उपबंध इस संविधान के आरंभ से दस वर्ष की अवधि तक रहेगा।''

***अध्यक्षः** क्या यह मूल प्रस्ताव पर संशोधन है?

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** यह एक संशोधन पर संशोधन है।

***एक माननीय सदस्यः** किन्तु कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** यह एक संशोधन पर संशोधन है। सदन इसका यह तरीका है कि जब संशोधनों की सूचना दे दी जाये, तो ऐसा समझा जाता है कि सारे संशोधन पेश हो चुके। पिछले सत्र में यही निर्णय दिया गया था। उसी नियम के अनुसार मैंने इस संशोधन की सूचना दी है।

***अध्यक्षः** बिल्कुल ठीक कहा जाये तो यह किसी संशोधन पर संशोधन नहीं है। यदि यह संशोधन है तो यह किसी ऐसे संशोधन पर संशोधन है, जो आपने पेश नहीं किया है।

***पं. ठाकुर दास भार्गवः** प्रणाली यह है कि संशोधन पर संशोधनों को पेश करने की अनुमति दी जाती है, चाहे वह अपने ही संशोधन पर संशोधन क्यों न हो? उपाध्यक्ष ने यही निर्णय दिया था।

***अध्यक्षः** संविधान के मसौदे में मैंने निर्णय दिया था कि मैं संशोधनों पर संशोधन तो स्वीकार कर लूंगा, किन्तु मूल अनुच्छेद पर संशोधनों को नहीं, यदि वे समय पर न आयें, चाहे वे संशोधनों पर संशोधन के बहाने ही क्यों न भेजे गये हों। इसी आधार पर

मैं इतने दिनों से चल रहा हूं। उपाध्यक्ष ने अध्यक्षता करते समय पहले जो निर्णय दिया था, उसकी मुझे कोई सूचना नहीं दी गई। अतः मैंने वह निर्णय दिया था और तब से मैं इसी पर चल रहा हूं। मैं समय बीतने पर ऐसे संशोधनों को स्वीकार नहीं करता, जो ठीक-ठीक कहा जाये तो संशोधनों पर संशोधन नहीं है, वरन् मूल अनुच्छेद पर संशोधन है।

***माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्त** (मध्यप्रान्त तथा बरार : जनरल): श्रीमान्, यह संशोधन पर संशोधन हो सकता है, श्री लारी के संशोधन संख्या 4 पर, जिसमें लिखा है कि प्रस्ताव की दूसरी कण्डिका की उप-कण्डिका (2) को हटा दिया जाये। इसका अर्थ यह है कि वे अनुसूचित जातियों की कुछ श्रेणियों को प्रतिनिधित्व नहीं देना चाहते। पंडित भार्गव चाहते हैं कि रक्षण दस वर्षों तक रहे।

***श्री जसपतराय कपूर**: क्या मैं निवेदन कर सकता हूं...

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त**: मैंने अभी समाप्त नहीं किया है। श्री लारी का संशोधन है कि प्रस्ताव की दूसरी कण्डिका की उप-कण्डिका (2) को हटा दिया जाये। उनका आशय यह है कि वे रक्षण नहीं रखना चाहते। पंडित भार्गव कहते हैं कि दस वर्षों के लिये रक्षण रहना चाहिये। अतः उनका संशोधन दूसरे संशोधन पर संशोधन है। मैं आपका ध्यान इसी बात की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं।

***श्री जसपतराय कपूर**: मैं आदरपूर्वक निवेदन करना चाहता हूं कि यह वस्तुतः दूसरे संशोधनों पर संशोधन है, जो श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब तथा श्री लारी द्वारा पेश किये गये थे, अतः यह संशेधन पूर्णतः नियमित समझा जा सकता है। इन संशोधनों का उद्देश्य प्रस्ताव को विशेष प्रकार से संशोधित करना है। श्री भार्गव केवल यही चाहते हैं कि प्रस्ताव को एक भिन्न प्रकार से संशोधित किया जाये। पिछले दोनों संशोधनों का उद्देश्य माननीय सरदार पटेल द्वारा सदन में पेश किये गये प्रस्ताव को संशोधित करना था। अब श्री भार्गव चाहते हैं कि उन दो संशोधनों में जिस प्रकार सुझाया गया है, उस प्रकार प्रस्ताव संशोधित नहीं होना चाहिये, वरन् दूसरे तरीके से संशोधित होना चाहिये।

***अध्यक्ष**: इस बात को ध्यान में रखते हुये और उस बात को ध्यान में रखते हुए, जो माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्त ने सदन में पेश की है, मैं यह मान लेता हूं कि यह संशोधन पर संशोधन है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव**: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं:

> ''कि प्रस्ताव में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:
>
> 'स्थानों के रक्षण तथा नामनिर्धारणों का उपबंध इस संविधान के आरम्भ से दस वर्ष की अवधि तक रहेगा।' ''

मैं इसे केवल औपचारिक रूप में पेश करता हूं। यदि मुझ पर आपकी आंख पड़ जाये, तो मैं इस प्रस्ताव पर पुनः बोलना चाहता हूं।

***अध्यक्ष**: अब संशोधन तथा मूल प्रस्ताव सदन के समक्ष वाद-विवाद के लिये पेश है

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं बहुसंख्यक सम्प्रदाय को तथा अल्पसंख्यक परामर्शदातृ समिति को बधाई देता हूं, जो कि इस देश में अल्पसंख्यकों की समस्या पर विचार करने के लिये नियुक्त की गई थी। श्रीमान्, इसमें तीन पक्षक हैं। सर्वप्रथम हमें इस आश्चर्यजनक सफलता पर, जो ब्रिटिश राज्य की दो शताब्दियों में भी प्राप्त नहीं हो सकी थी, माननीय सरदार पटेल को बधाई देनी है। उन्होंने इसे दो ही वर्ष में पूरा कर लिया। अंग्रेजों ने भारत में अपना अखंड राज्य बनाये रखने के लिये फूट फैलाई थी। अब, जो काम दो सदियों में पूरा नहीं हो सका वह दो वर्षों में पूरा हो गया है। अब अल्पसंख्यक स्वयं आगे बढ़कर कहते हैं कि वे कोई रक्षण नहीं चाहते। यह एक सफलता है। दूसरा पक्षक अल्पसंख्यक परामर्शदातृ समिति है और तीसरा पक्षक स्वयं अल्पसंख्यक हैं। हमें इन तीनों को बधाई देनी है। अब लोग पूछ सकते हैं: ''फिर क्या बात है कि आपने अपने रक्षण का परित्याग नहीं किया?'' मैं नहीं समझता कि हमें धार्मिक अल्पसंख्यक होने के कारण रक्षण मिल रहा है। हम धार्मिक अल्पसंख्यक नहीं हैं। हमें आर्थिक, अल्पसंख्यक होने के कारण रक्षण मिल रहा है। हम धार्मिक अल्पसंख्यक नहीं हैं। हम आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक अल्पसंख्यक हैं। हम दो निर्योग्यताओं से तो पीछा छुड़ा चुके हैं। महात्मा गांधी ने कृपा करके हमें दो प्रकार की स्वतंत्रता दी है—सामाजिक स्वतंत्रता और राजनैतिक स्वतंत्रता। अब श्रीमान्, बहुसंख्यक जाति संख्या में अधिक है। आपने देखा कि कौरव संख्या में सौ थे और पाण्डव पांच ही थे, पर उन्हें राज्य में समान अधिकार था। यद्यपि भगवान् कृष्ण अन्तिम अवतार के रूप में स्वतंत्रता या यूं कहिये देश के प्रशासन में समुचित अंश नहीं प्राप्त करा सके, किन्तु बाद में महात्मा गांधी ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर हरिजनों के लिये राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त की; उन्होंने केवल राजनैतिक स्वतंत्रता ही प्राप्त नहीं की; वरन् 1932 तक हमसे घृणा की जाती थी, हमें चिढ़ाया जाता था, सताया जाता था और हमारे साथ दुर्व्यवहार होता था, पर 1932 के पश्चात् वह घृणा प्रेम में परिणित हो गई। कुछ माननीय सदस्यों ने कहा है कि अनुसूचित जातियों को रक्षण नहीं मिलना चाहिये। हमें बिना पूछे ही इस बहुसंख्यक जाति ने रक्षण दे दिया है। मेरे माननीय मित्र श्री लारी तथा अन्य मित्र कह रहे हैं: ''इन अनुसूचित जातियों को रक्षण क्यों दिया जाये?'' हम अपने सम्प्रदाय के लिये रक्षण नहीं मांग रहे। हम वे लोग हैं जिन्होंने सब लोगों को आश्रय दिया है। तीन हजार वर्ष पूर्व हमने आपको शरण दी। हमारी जाति ने ही सबको आश्रय दिया है। हमारी जाति आश्रय नहीं मांगती। श्रीमान्, हमारी सहायता बिना अंग्रेज इस देश पर राज्य नहीं कर सकते थे; हमारे सहयोग के बिना मुस्लिम इस देश पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते थे और कांग्रेस आजादी प्राप्त नहीं कर सकती थी। 1942 में ही हम आंदोलन में शामिल हुये और हमारे शामिल होने के ही फलस्वरूप हम अंग्रेजों को निकाल सके। अत: श्रीमान्, हमारे सहयोग बिना, हमारी सहायता बिना इस देश में कोई भी कायम नहीं रह सकता। हम समस्त देश के साधिकार शाही स्वामी हैं और भारत के आदि निवासियों के वंशज होने के नाते हमें सब कुछ अधिकार है, किन्तु हम ऐसे संकुचित मनोवृत्ति वाले नहीं हैं कि दूसरों को यहां से निकाल दें। हम आश्रय देते रहे हैं; हम भूमि को जोतते रहे हैं; हम दूसरों के लिये परिश्रम करते रहे हैं। देखिये, हमने कितना बलिदान कर दिखाया है। कई शताब्दियों से हमारे साथ दुर्व्यवहार होता रहा है, फिर भी हम अपने धर्म पर जमे रहे। कुछ ऐसी गन्दी मछलियां हैं जो सिक्ख या ईसाई बन गये। किन्तु आज भी सात करोड़ लोग हिन्दू धर्मावलम्बी हैं, जिससे यही प्रकट है कि इस जाति का लक्षण ही दु:ख सहन करना, बलिदान करना

तथा परिश्रम करना है। अत: श्रीमान्, मैं आपका, बहुसंख्यकों का, आश्रय नहीं मांग रहा। मैं जानता हूं 'प्रत्येक व्यक्ति को एक मत देने का अधिकार है'। आखिर, क्या आप यह समझते हैं कि आप ही बहुसंख्यक सम्प्रदाय है? मैं आपको अल्पसंख्यक सम्प्रदाय बना सकता हूं। यह तो केवल वर्ग का प्रश्न है जाति का नहीं। जब ऐसी बात है तो मुझे रक्षा की अपेक्षा नहीं है। आपने जो रक्षण दिया है उसके लिये मैं आभारी हूं। अब आप सहायता का हाथ बढ़ाते हैं तो मैं उसे क्यों ठुकराऊं? हम अनुसूचित जातियों ने इस देश पर अरब से आक्रमण नहीं किया है। हम यहां बाहर से नहीं आये हैं और यदि हम दूसरे लोगों को मिला नहीं सकते तो हमारे लिये कोई दूसरा राज्य नहीं है जहां हम जाकर रह सकें। हम पृथक् राष्ट्र नहीं हैं, हम एक ही धर्म, एक ही संस्कृति, एक ही परम्परा के हाड़मांस हैं, हम इस भूमि के असली बालक हैं। हमारे साथ भिन्न बर्ताव कैसे हो सकता है? अत: मेरे माननीय मित्र हमारी तथा हमारे सम्प्रदाय की आड़ में अपनी जाति की वकालत न करें। मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि यदि उनके दिल में हमारे लिये कोई भी स्नेह है, तो हमें हमारे ही हितार्थ रक्षण मिल जाने दें। अपनी ओर से तो हम अपने हितों का संरक्षण दूसरों से अधिक कर सकते हैं। आत्म-सहायता सर्वोपरि सहायता है; यही नारा है और यह सत्य है। वे कहते हैं 'आपको रक्षण की क्या आवश्यकता है?' स्वतंत्रता तब तक पूर्ण नहीं कही जा सकती, जब तक कि वह तीन अंगों में पूर्ण न हों। प्रथम सामाजिक है, दूसरा राजनैतिक है और तीसरा आर्थिक। स्वाधीनता के लिये यह बहुत आवश्यक तथा मुख्य है। मैं जानता हूं कि जहां तक आर्थिक स्वतंत्रता का सम्बन्ध है, समूचा देश ही पिछड़ा हुआ है, किन्तु यह सम्प्रदाय विशेषत: पिछड़ा हुआ है, आज भी, यहीं और अभी, मैं रक्षण की समाप्ति के लिये तैयार हूं, यदि प्रत्येक हरिजन परिवार को 10 एकड़ सिंचाई की भूमि तथा 20 एकड़ सूखी जमीन मिल जाये तथा हरिजनों के सारे बच्चों को विश्वविद्यालयों तक नि:शुल्क शिक्षा मिले और असैनिक या सैनिक विभागों में मुख्य पदों का पांचवा भाग मिले। मैं बहुसंख्यक सम्प्रदाय को चुनौती देता हूं कि यदि वे इतना देने के लिये तैयार हैं तो मैं सारे रक्षण छोड़ने के लिये तैयाार हूं। मेरे मुस्लिम मित्रों को जान लेना चाहिये कि हम हरिजन लोग राष्ट्र प्रेम में किसी से कम नहीं हैं। हमें ही अधिक लड़नां पड़ा क्योंकि यह हमारा देश है। आखिर आप तो आक्रमणकारी हैं, निष्क्रमणकारी हैं, आपको इस देश में इतनी दिलचस्पी नहीं हो सकती, जितनी कि हमें हो सकती है और हमीं लोग इस देश की समस्त राष्ट्रीय सम्पत्ति का उत्पादन करते हैं, कृषिश्रम द्वारा अथवा औद्योगिक श्रम द्वारा। दुर्भाग्यवश, शहद एकत्र करने वाली मधुमक्षिका के समान हम कड़ा परिश्रम करते हैं, किन्तु हम शहद से दूर ही रहते हैं, किन्तु समय आयेगा और यदि आप अब तक के समान ही स्वार्थी बने रहे, तो अंग्रेजों के साथ जो कुछ हुआ है वही आपके साथ भी किया जायेगा। आपका क्या है जो कि मध्य एशिया, मंगोलिया और मंचूरिया से आये हैं? आपको अपने स्थानों पर लौटना होगा। वहां से भी आपको निकाल दिया जायेगा। इस देश में सबसे अधिक हक हमीं को है। अत: आपने कोई कृपा नहीं की है, अपितु उचित ही किया है।

मैंने आपको बताया है कि जहां तक इस देश का सम्बन्ध है, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समस्या आर्थिक समस्या ही है। यदि आप निश्चय कर लें तो इस प्रश्न का हल करना बहुत सरल है। आप सारे देश में जमींदारी का उन्मूलन कर रहे हैं। आपके पास लाखों

[श्री एस. नागप्पा]

एकड़ भूमि आ जायेगी। यदि आप प्रत्येक हरिजन परिवार को, जिसके पास भूमि नहीं है, सारे भूमिहीन हरिजनों को दस एकड़ सिंचाई की भूमि और 20 एकड़ सूखी भूमि दे दें और बच्चों को विश्वविद्यालय तक की शिक्षा दे दें तो मैं रक्षण छोड़ने के लिये तैयार हूं। लीजिये।

***श्री मोहनलाल गौतम** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): यदि आप 10 एकड़ सिंचाई की भूमि तथा 20 एकड़ सूखी भूमि दे दें तो प्रत्येक ब्राह्मण हरिजन बनने के लिये तैयार है।

***श्री एस. नागप्पा:** यदि ब्राह्मण को भूमि दे भी दी जाये तो वह जोतेगा कैसे? अब तक उसके पास भूमि रही है। उसे हमारा आश्रय लेना पड़ता है, हमें नौकर रखना पड़ता है। यह तो नपुंसक को रम्भा सौंपना है। अपने ब्राह्मण मित्रों से मैं कहता हूं कि ''आपके भूमि मांगने से क्या लाभ है? भूमि तो कृषक को देनी चाहिये, वही भूमि का स्वामी होना चाहिये। आप स्वामित्व के शौक से ही उसके स्वामी नहीं बनना चाहते। आपके पास जो सम्पत्ति हो उसका उपयोग आपको करना चाहिये।'' मेरे ब्राह्मण मित्र के ऐसा कहने से कोई लाभ नहीं है कि ''मैं आगे बढ़कर कहता हूं कि मैं हरिजन बनने के लिये तैयार हूं।'' ईसाई या मुस्लिम के समान कोई हरिजन नहीं बन सकता। आपको जन्मजात हरिजन होना होता है, आपको हरिजन के रूप में जन्म पाना होता है, आज आप ईसाई या मुस्लिम बन सकते हैं, अगले दिन आप दाढ़ी रखकर सिख बन सकते हैं, किन्तु आप बिना जन्म लिये हरिजन नहीं बन सकते।

***एक माननीय सदस्य:** बहुत स्वार्थमय है।

***श्री एस. नागप्पा:** ऐसा मत समझिये कि हरिजन हर किसी को अपनी जाति में लेते रहे हैं। यदि आप हरिजन सम्प्रदाय में आना चाहते हैं, तो आपको झाड़ू देने तथा मल-मूत्र साफ करने के लिये तैयार रहना चाहिये। आप ऐसा नहीं करना चाहते और अपनी शान रखते हैं। आप कहते हैं: ''मैं हिन्दू हूं और मैं दूसरे के लिये झाड़ू निकाल नहीं सकता और मल-मूत्र साफ नहीं कर सकता।'' आप तो पांचों घी में रखना चाहते हैं: ''चुपड़ी मेरी और रूखी तुम्हारी। यदि मैं छोड़ूं, तो रुखी को ही छोड़ूं चुपड़ी को नहीं।'' यही आपका सिद्धांत है न? मैं श्री मोहनलाल गौतम से पूछता हूं, जिन्होंने कृपा करके हरिजन बनना चाहा था।

मेरे माननीय मित्र श्री लारी के संशोधन के विषय में, कि अनुसूचित जातियों के लिये रक्षण समाप्त हो जाना चाहिये, मैं अपने माननीय मित्र को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने सदन में यह विचार रखा है। किन्तु इसे आदर्श ही रहने दीजिये, इसे क्रियात्मक रूप नहीं दिया जा सकता। आज जो कुछ हुआ है और कहा गया है उसके बाद मेरे माननीय मित्र श्री लारी को स्मरण रखना चाहिये कि आज नहीं, तो कुछ समय पहले, वे भी हरिजन थे। उन सम्प्रदायों में हरिजन ही शामिल हुये थे।

***मि. जैड.एच. लारी:** यदि मुझे दस एकड़ सिंचाई की भूमि तथा 20 एकड़ सूखी भूमि मिल जाये तो मुझे हरिजन बनने में बहुत प्रसन्नता होगी।

***श्री एस. नागप्पा:** यदि आप मल-मूत्र साफ कर सकते हैं तो हरिजन बन सकते हैं। आपको कोई नहीं रोकता। सम्प्रदाय तो कर्मानुसार होते हैं, किसी के लिखा नहीं हुआ है कि वह अमुक है। यदि आप अध्यापन का कार्य करें तभी अध्यापक कहला सकते हैं। भंगी का कार्य करे तो भंगी हो जाते हैं, झाड़ू निकालें तो मेहत्तर कहलाते हैं। यदि आप हरिजन बनने के इतने शौकीन हैं तो उनका कर्म आप ले सकते हैं। जो भी मित्र झाड़ू निकालने या मल-मूत्र साफ करने का काम करने के लिये तैयार हों...

***अध्यक्ष:** कृपया सदन के समक्ष प्रस्तुत प्रस्ताव तक ही अपनी बात को सीमित रखें। हरिजनों के कर्त्तव्यों को तो हम सब जानते हैं।

***श्री एस. नागप्पा:** अब मैं उपयोगी बात पर आता हूं। मुझे आशा है कि मेरे माननीय मित्र, जो मेरे सम्प्रदाय से ईर्ष्या करते रहे हैं, सदा के लिये ऐसा नहीं करते रहेंगे।

हम रक्षणों को पहले ही समाप्त कर चुके हैं। मैं पूछता हूं कि इस सदन के लिये रक्षण कहां है। हमें सवर्ण हिन्दुओं के साथ मिला दिया गया था और उन्होंने हमें चुना था। हम सवर्ण हिन्दुओं के प्रतिनिधि हैं। मैं केवल हरिजनों के लिये ही विधि नहीं बना रहा हूं, प्रत्युत तीसों करोड़ लोगों के लिये बना रहा हूं। संविधान केवल मेरे ही सम्प्रदाय के लिये नहीं बन रहा है। मैं केवल अपने ही सम्प्रदाय द्वारा निर्वाचित नहीं हुआ हूं। अत: वस्तुत: हमने रक्षण समाप्त कर दिया है। यह संसद, यह संविधान सभा संयुक्त निर्वाचक मंडलों द्वारा चुनी गई है। इसे ईसाइयों, सिक्खों, हरिजनों तथा हिन्दुओं ने स्वीकार किया है। केवल मेरे वे ही मित्र अपने लोगों द्वारा चुने गये हैं, जो कि दो राष्ट्र के सिद्धांत का प्रचार करते रहे हैं। मैं कहता हूं, श्रीमान्, कुछ त्रुटियां है। अल्पसंख्यक सम्प्रदाय की सद्भावना का बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने समुचित रूप में उपयोग नहीं किया है। मैं ऐसे दृष्टान्त दे सकता हूं, जहां वे अपनी बात से पीछे हट गये हैं, जहां वे विशाल-हृदय सिद्ध नहीं हुये हैं। मद्रास को ही लीजिये, जहां 80 लाख हरिजन हैं। क्रिप्स-प्रस्ताव के अनुसार प्रत्येक दस लाख व्यक्तियों के लिये एक प्रतिनिधि आना चाहिये। हम केवल सात हैं यदि जनसंख्या के अनुसार रक्षण हो तो हमें आठ होना चाहिये था। किन्तु यह तो छोटी सी बात है कि हम आठ हों या सात, काम तो वही होता है। त्रावनकोर को लीजिये। इसी राज्य को हरिजनों के सम्बन्ध में सर्वप्रथम तथा प्रगतिशील समझा जाता है। इसी राज्य ने सर्वप्रथम मंदिर प्रवेश लागू किया। किन्तु वह राज्य संविधान सभा में हरिजनों को प्रतिनिधित्व देने में असमर्थ रहा है। साठ लाख की जनसंख्या में से तेरह लाख हरिजन हैं। इन तेरह लाख हरिजनों की उपेक्षा कर दी गई है और चार लाख मुसलमानों को एक स्थान दिया गया है। सोहन की पगड़ी उतार कर मोहन के सिर पर रख दी गई है। इसी कारण हम रक्षण चाहते हैं। यह कहा जा सकता है कि वह तो राज्य है। युक्त प्रान्त को लीजिये। 1931 की जनगणना के अनुसार युक्त प्रान्त में 1 करोड़ 20 लाख हरिजन हैं। मैं देखता हूं कि उस प्रान्त से केवल छ: सदस्य हैं। बंगाल की क्या स्थिति है? मेरे पास बंगाल के विषय में ठीक-ठीक आंकड़े नहीं हैं। पंजाब में क्या है? मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव कहते रहे हैं कि वहां 18 लाख हरिजन तथा 4 लाख सिख हरिजन हैं, कुल मिलाकर 22 लाख हुये। मैं देखता हूं कि वहां से हरिजनों का एक ही प्रतिनिधि आया

[श्री एस. नागप्पा]

है। क्रिप्स के प्रस्तावों के अनुसार दो होने चाहिये थे। अब हम रियासतों को देखें। पटियाला रियासत की क्या स्थिति है? 26 लाख की जनसंख्या में से 9 लाख हरिजन हैं। इस परिषद् में कम से कम एक प्रतिनिधि होना चाहिये था। मध्यभारत को लीजिये। 70 लाख की जनसंख्या में से वहां 17 लाख हरिजन हैं। अब परम मान्य गवर्नर जनरल उस रियासत में गये थे, तब हरिजनों ने उनसे अभिवेदन किया था—''श्रीमान्, सत्तर लोगों के सदन में हमारे केवल तीन सदस्य हैं, यद्यपि हमारी जनसंख्या 17 लाख हैं।'' देखिये, बहुसंख्यक जाति ने कैसा न्याय किया है। हम आपसे अपील करते हैं, हम दावा नहीं करते, हम उनकी सद्भावना से अपील करते हैं, केवल करबद्ध हो कर नहीं, वरन् घुटने टेककर कि हमारे साथ न्याय कीजिये। हम कृपा की याचना करते हैं। आखिर, हम मूक हैं, हमारी आवाज धीमी है। मध्यभारत में केवल तीन सदस्य हैं, संविधान सभा में एक भी नहीं। अपनी इस स्वार्थता के कारण, आप हमें रक्षण मांगने के लिये बाध्य कर रहे हैं। यह आपके परीक्षण का काल था, यदि आप विशाल-हृदयता दिखाते, तो हम सबसे पहले और सबसे आगे बढ़कर कहते, कि ''हम कोई रक्षण नहीं चाहते।'' दोष आपका है हमारा नहीं। इस कारण महात्मा गांधी कहते थे ''पुराने जमाने में आपके पिताओं और पूर्वजों ने उनके विरुद्ध जो पाप किये हैं, उन्हें धोने के लिये हरिजन सेवक बनिये।'' गलती आपकी ही है। यदि किसी मंदिर और मस्जिद के विषय में विवाद होता था, तो वेदी पर हमारा शीश चढ़ाया जाता था। यदि कोई हिन्दू-मुस्लिम दंगा होता तो हम ही ने युद्ध लड़ा। हमें क्या पुरस्कार मिला? ''ठीक है, परिश्रम करते जाइये'', यह पारितोषिक मिला ''तुम मेरे प्रहरी कुत्ते हो; मेरे दास या गुलाम बने रहो'', यही इनाम मिला। क्या इसे आप न्याय कहते हैं? अब तक आप ऐसा कर सकते थे क्योंकि हम जानते नहीं थे। महात्मा जी ने उस अज्ञानता को दूर कर दिया है। उन्होंने हमारे दिमाग में पर्याप्त देशभक्ति, पर्याप्त जागरूकता भर दी है। आप सोच सकते हैं कि महात्मा जी अब नहीं रहे। किन्तु आपको ज्ञात होना चाहिये कि उनकी आत्मा सर्वत्र है, उनकी भावना सर्वत्र विद्यमान है। आप आज उन्हें देख नहीं सकते; किन्तु वे हमारे कर्मों को देख रहे हैं। कांग्रेसजन, जो उनके वंशज होने का दावा करते हैं, जानते हैं कि वे इस सभा को देख रहे हैं। मैं यह आप पर छोड़ता हूं। आप जहां भी चाहें रक्षण समाप्त कर सकते हैं। मैंने चुनौती दे दी है, आपको इसे स्वीकार करना है।

मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव के संशोधन पर, जिसके अनुसार स्थानों के रक्षण तथा नाम निर्देशन के उपबंध दस वर्ष ही रहेंगे, मुझे यही कहना है कि इस सदन के लगभग हम सभी हरिजन सदस्य एकत्र हुये थे तथा माननीय पंडित नेहरू ने कृपा करके हमें समझाया था कि हमारे अपने ही हितों में यही सर्वोत्तम बात है। उनके परामर्श के अनुसार हमने इस बात पर निर्णय किया है। आखिर, यह ऐसा प्रश्न है जिस पर संसद को पुनर्विचार करना है। यदि दस वर्षों के पश्चात् हमारी स्थिति वही रहती है जो अब है, तो यह संसद के हाथ में है कि रक्षण को जारी रखे या समाप्त कर दे। आपको कौन रोकता है कि आप पांच या दस वर्ष पश्चात या दो वर्ष पश्चात् ही संसद का एक अधिनियम बनाकर कह सकते हैं–''हरिजनों की मांग स्वीकार कर दी गई है, अब वे दूसरों के समान स्तर पर हैं और उनके लिये यह स्थानों का रक्षण अपेक्षित नहीं है।'' आज यह जिस रूप में है आप उस पर फिर विचार कर सकते हैं। अतः हमने स्वीकार कर लिया कि रक्षण इस संविधान के आरंभ से दस वर्ष तक रहने चाहिये।

मैं एक बार फिर अल्पसंख्यक समिति के सदस्यों का और इसके सभापति हमारे माननीय सरदार पटेल का, जिन्होंने कि हमारे अधिकारों के संरक्षण के लिये इतना कष्ट उठाया है, धन्यवाद देता हूं। मैं, श्रीमान्, आपका धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे यह अवसर दिया है।

***अध्यक्ष:** मैं सदस्यों से कहना चाहता हूं कि वे अपनी वक्तृता को दस मिनट तक ही सीमित रखें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, डाक्टर सरदार पटेल ने जो प्रस्ताव पेश किया है, वह हमारे देश के सांवैधानिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण कदम है और इस पर भविष्य के इतिहासकार तथा सांवैधानिक लेखक प्रसन्नता से हर्ष प्रकट करेंगे। श्रीमान्, आरम्भ में ही मैं कह देना चाहता हूं कि मैं इस प्रस्ताव के साथ हृदय से पूर्णत: सहमत हूं (साधु, साधु)। श्रीमान्, मेरे पास जो थोड़ा सा समय है, उसमें मैं केवल मुख्य बातों पर ही बोलना चाहता हूं। मूल प्रस्ताव में और दो मुख्य प्रस्तावों में थोड़ा सा अन्तर भी है और वे किसी हद तक मिलते-जुलते भी हैं। मूल प्रस्ताव के अनुसार मुसलमानों का रक्षण समाप्त होना है। श्री इस्माइल साहिब ने जो संशोधन पेश किया है, उसके अनुसार रक्षण रहना चाहिये। श्री लारी सब रक्षणों को समाप्त करना चाहते हैं, अत: मूल प्रस्ताव और श्री लारी का संशोधन इस विषय में सहमत हैं कि मुसलमानों का रक्षण समाप्त हो जाना चाहिये और यह श्री इस्माइल के संशोधन के विपरीत है।

फिर अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में मूल प्रस्ताव और श्री इस्माइल उन्हें बनाये रखना चाहते हैं, किन्तु श्री लारी उन्हें मिटाना चाहते हैं। पिछड़े हुये वर्ग के सिक्खों के सम्बन्ध में भी स्थिति वैसी ही है। अत: श्री लारी तथा श्री इस्माइल के संशोधन एक दूसरे के सर्वथा विपरीत हैं।

श्रीमान्, मेरे विचार में हमें उस स्थिति पर ध्यान देना चाहिये, जिसमें भारतीय मुस्लिमों ने स्थानों का रक्षण स्वीकार किया था। वह ऐसा समय था, जबकि साम्प्रदायिक स्थिति बहुत असंतोषप्रद थी और उस समय कुछ रक्षण आवश्यक दिखाई देते थे। किन्तु अब स्थिति बहुत सुधार गई है और प्रतिदिन सुधर रही है और बहुत समय से दोनों सम्प्रदायों में अतीव समन्वय है। मैं समझता हूं कि किसी प्रकार के रक्षण स्वस्थ राजनैतिक विकास के प्रतिकूल हैं उनसे एक प्रकार की लाघव-भावना प्रकट होती है। वे एक प्रकार की भय-भावना से पैदा होते हैं और वास्तव में उनका प्रभाव यह होगा कि मुसलमान एक विधि-आश्रित अल्पसंख्यक बन जायेंगे। तब फिर मुस्लिम रक्षणों का मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध पृथक् निर्वाचक मंडलों से है, जिनके कारण इतनी मुसीबतें पैदा हो गई हैं। अत: मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि रक्षणों को बनाये रखने से उन पृथक् निर्वाचक मंडलों की दु:खद स्मृति तथा उससे सम्बद्ध समस्त कड़वाहट सदा के लिये बनी रहेगी। मेरा निवेदन है कि यह तो दस वर्षों के लिये भी बुरा है।

तत्पश्चात्, श्रीमान्, मुझे विश्वास है कि मुस्लिमों के लिये स्थानों का रक्षण, विशेषतया इस समय, मुस्लिमों के लिये ही वास्तव में हानिप्रद होगा। वास्तव में यदि हम रक्षण स्वीकार

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

कर लें और निर्वाचन करें तो हिन्दुओं और मुस्लिमों के मध्य इस समय जो सम्बन्ध हैं वे बिगड़ जायेंगे। स्थिति में जो अत्यधिक सुधार हुआ है वह खत्म हो जायेगा। विगत के हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों की स्मृति ताजा हो जायेगी और भावनाओं में कटुता आ जायेगी। हिन्दुओं और मुस्लिमों में फूट बढ़ जायेगी—जो बहुत अवांछित है, चाहे हम केवल मुसलमानों के दृष्टिकोण से ही उस पर विचार करें। इससे मुसलमानों में ही फूट पड़ जायेगी। वास्तव में यदि स्थान रक्षित हों तो एक अभ्यर्थी मुसलमान खड़ा कर सकते हैं और एक हिन्दू। मुस्लिम विभक्त हो जायेंगे। वे एक अभ्यर्थी के पीछे लग जायेंगे या दूसरे के और इससे व्यर्थ के प्रश्न पर उन्हीं में विभाजन हो जायेगा। अतः मेरा निवेदन है कि मुसलमानों के लिये रक्षण अवांछनीय होगा। वर्तमान संदर्भ में, जबकि हमने पृथक् निर्वाचक मंडलों को समाप्त करके अपने सम्बन्ध सुधार लिये हैं, यह तर्कसंगत नहीं होगा और यह मुस्लिमों के लिये तथा समस्त राजनैतिक ढांचे के लिये भी निश्चय से हानिकारक है।

श्रीमान्, रक्षण ऐसे प्रकार का रक्षा-उपाय है, जिससे वह वस्तु, जिसकी रक्षा की जाती है, नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। अतः इन सब कारणों से, मुझे मुसलमानों के लिये रक्षण का जोरदार विरोध करना चाहिये। अब, श्री लारी के संशोधन का भी यही आशय है कि मुस्लिमों के लिये कोई रक्षण नहीं होना चाहिये और जहां तक मुसलमानों का सम्बन्ध है, मैं उसका स्वागत करता हूं। किन्तु उनके संशोधन के साथ यह शर्त अड़ी हुई है कि सामूहिक मतदान होना चाहिये। उनका तर्क मुख्यतः यूरोपीय विचारों पर आधारित है। आयरलैंड में दोनों वर्गों के मध्य का संघर्ष अनन्त है। वह इतिहास के प्रभात से ही आरम्भ हुआ था और कभी समाप्त होने वाला नहीं है। किन्तु जहां तक हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों का विषय है, दोनों सम्प्रदायों के बीच मैत्री केवल अस्थायी रूप से टूट गई थी और प्रसन्नता की बात है कि देश में अतीत काल से जो प्राचीन मैत्री चली आ रही थी, वह पुनः स्थापित हो गई, स्थिति पुनः सुधर गई है। सामूहिक मतदान की पद्धति आवश्यक नहीं है और इस पर काम करना अत्यन्त कठिन है। मैं नहीं समझता कि यह भारत की विद्यमान स्थितियों में आवश्यक है, विशेषतः क्योंकि यहां करोड़ों निरक्षर मतदाता हैं। अतएव मेरा निवेदन है कि किसी प्रकार का सामूहिक मतदान अथवा कोई अन्य विवेकयुक्त उपाय अथवा उस प्रकार के कोई सुधार अनावश्यक हैं। केवल मुस्लिम दृष्टिकोण से ही हम कोई रक्षण नहीं चाहते।

तत्पश्चात्, फिर सम्प्रदायों के लिये स्थानों का रक्षण अनिर्वायतः पृथक् निर्वाचक मंडलों से सम्बद्ध है। पृथक् निर्वाचक मंडलों के हटाने के पश्चात् स्थानों का रक्षण नितांत तर्क विरुद्ध होगा। यदि हम स्थानों के लिये खड़े हों, रक्षित स्थानों के लिये नहीं, तो परिणाम यह होगा कि हिन्दू और मुस्लिम एक दूसरे के अधिक निकट आ जायेंगे। यद्यपि हम अल्पसंख्यक हैं और इसी बात पर श्री लारी ने बहुत बल दिया है। तो मेरे विचार में किसी हिन्दू अभ्यर्थी के लिये मुसलमानों की अवहेलना करना सम्भव नहीं होगा। वास्तव में प्रत्येक स्थान के लिये कम से कम दो अभ्यर्थी होंगे और मुकाबला होने की स्थिति में, मुसलमानों का बहुत महत्त्व होगा और यह भी हो सकता है कि यदि वे बुद्धिमान

अल्पसंख्यकों की तरह कार्य करें और ठीक प्रकार से एक या दूसरे अभ्यर्थी का साथ दें, तो सब निर्णय उन्हीं के हाथ में होंगे। चुनावों में उनकी आवाज निर्णायक होगी। हो सकता है कि भारी बहुमत दिखाई देने वालों को निर्वाचन के अन्त में पता लगे कि वह एकमात्र वोट से पराजित हो गये। अत: कोई अभ्यर्थी मुस्लिमों की अवहेलना नहीं कर सकता, चाहे उसे कितनी ही विजय की आशा क्यों न हो। अत: मुस्लिमों की खैरियत इसी में है कि वे सार्वजनिक मामलों में बुद्धिमानी से अपना भाग अदा करे और हिन्दुओं के साथ मिलकर चलें। इससे दोनों सम्प्रदायों को बहुत लाभ होगा, और अगले निर्वाचनों में बिना किसी रक्षणों के ही हिन्दू और मुस्लिम एक दूसरे से निर्वाचनों में और अपनी मातृभूमि की सेवा के लिये सार्वजनिक मामलों में एक दूसरे से सहयोग करेंगे।

मेरे जो माननीय मित्र यह समझते हैं कि रक्षण होने चाहियें, वे विगत को ही देखते हैं। वे पीछे की ओर आंखें लगाये हुये हैं। किन्तु हमारी आंखें, भारतीय मुस्लिमों की आंखें भविष्य की ओर होनी चाहिये। हमारा दृष्टिकोण प्रगतिशील होना चाहिये। अब, भारतीय राजनीति में बहुत से विषय हैं, मैं उनमें से किसी के विषय में यह नहीं सोच सकता कि उनमें साम्प्रदायिक आधार पर कुछ अन्तर हो सकता है। प्रान्तों में मुख्य विषय यह हैं—शिक्षा, स्वच्छता और स्थानीय स्वशासन। इन विषयों से किसी सम्प्रदाय विशेष पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। हिन्दुओं और मुसलमानों को अपनी मातृभूमि के कल्याणार्थ साथ-साथ खड़े होकर इन विषयों पर कार्य करना होगा।

केन्द्रीय क्षेत्र में औद्योगिक समस्यायें हैं, सिंचाई की योजनायें हैं, प्रतिरक्षा तथा परराष्ट्र सम्बन्धों का प्रश्न है और शान्ति तथा व्यवस्था की समस्यायें भी हैं। इन मामलों में साम्प्रदायिकता कुछ भी नहीं है तथा उनमें प्रत्येक की समान रूपेण रुचि है, चाहे उसका सम्प्रदाय या धर्म कुछ भी हो। मेरा बहुत पक्का ख्याल है कि धर्म का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये। यह बात नहीं है कि धर्म की उपेक्षा कर दी जाये; किन्तु धर्म तो निजी बात ही है और सार्वजनिक जीवन में हमें सम्प्रदायों के आधार पर नहीं सोचना चाहिये। इस सभा में अथवा बाहर सार्वजनिक जीवन में, हम न हिन्दू हैं और न मुस्लिम ही हैं। अपने निजी जीवन में हमें पक्के हिन्दू या मुसलमान होना चाहिये। अत: यदि हम निजी जीवन और सार्वजनिक जीवन के बीच अपने दृष्टिकोण में भेद करें, तो कोई झगड़ा नहीं होगा। राज्य को अपने नागरिकों की धार्मिक भावनाओं में यथासम्भव न्यूनतम हस्तक्षेप करना चाहिये। उन्हें अछूता छोड़ देना चाहिये। यदि मुस्लिम अपना कर्त्तव्य ठीक प्रकार से तथा विवेकपूर्वक पूरा करें, यदि वे अपना कर्त्तव्य निष्ठापूर्वक तथा देशप्रेमपूर्वक पूरा करें, तो उनकी स्थिति ठीक बनी रहेगी।

अन्य अल्पसंख्यकों के विषय में मैं निवेदन करता हूं कि हमारी स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो जानी चाहिये। अनुसूचित जातियां हैं और सिखों में नई अनुसूचित जातियां भी हैं, सीमावर्ती क्षेत्र हैं, पृथक् किये हुये तथा अंशत: पृथक् किये हुये क्षेत्र हैं और आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय भी हैं; उन सबकी रक्षा की जायेगी। श्री मोहम्मद इस्माइल साहिब के संशोधन से उनकी रक्षा होंगी। श्री लारी उन सबको समाप्त कर देना चाहते हैं। किन्तु उन सब अल्पसंख्यकों की स्थिति कायम रखी जायेगी। यह तो निर्वाचक मंडलों और सरकार की पद्धति में भरोसा रखने का प्रश्न है। यदि इनमें से कोई अल्पसंख्यक यह अनुभव करते हैं कि स्थानों का

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

रक्षण प्राप्त किये बिना उनकी रक्षा नहीं होगी तो उन्हें खुशी से रक्षण मिलने दीजिये। जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, मेरे विचार में हमें कोई शिकायत नहीं है। यह तो उन्हें संतुष्ट करने का ही प्रश्न है। यदि उनका ख्याल है कि उन्हें रक्षण से संतोष हो जायेगा तो उन्हें लेने दीजिये और इस सम्बन्ध में श्री लारी का संशोधन कुछ आवश्यकता से अधिक आगे बढ़ जाता है और वह अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर आक्रमण है। सिख अनुसूचित जातियों के विषय में भी यही बात है। यह तो उन्हें कहना है कि वे स्थानों का रक्षण चाहते हैं या नहीं, उनके लिये कुछ कहना हमारा काम नहीं है। यह कोई तर्क या युक्ति का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह तो वास्तव में प्रत्येक वर्ग अथवा सम्प्रदाय में विश्वास तथा सुरक्षा की भावना पैदा करने का प्रश्न है कि किसी विशेष योजनानुसार, उनके साथ न्यायपूर्वक तथा उचित व्यवहार किया जायेगा।

जहां तक मुसलमानों का सम्बन्ध है, हमारे यहां पश्चिमी बंगाल के विधान मंडल में वाद-विवाद हो चुका है, जहां मैंने देखा कि मुसलमानों का मत बहुलता से स्थान-रक्षण के विरुद्ध था। संघीय बोर्ड आदि के चुनावों के लिये स्थान-रक्षण की पद्धति कभी की समाप्त हो चुकी है और हिन्दू तथा मुस्लिम मित्रों के समान साथ मतदान करते हैं। अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हिन्दुओं को मुस्लिमों के मत मांगने पड़ते हैं। यह बहुत शक्तिशाली और स्वागत योग्य बात है। मुसलमानों को यथार्थवादी होना चाहियें, जैसी कि उनसे आशा की जाती है और उनकी आंखें अतीत पर नहीं गड़ी रहनी चाहिये। उन्हें चाहिये कि यथासम्भव शीघ्र अपनी नई स्थिति में जमने का प्रयत्न करें यदि वे महान् हिन्दू सम्प्रदाय में विश्वास का प्रदर्शन करें तो मुझे भरोसा है कि वे उनके साथ औचित्य और न्याय से बर्ताव करेंगे।

***डॉ. एच.सी. मुखर्जी** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान्, सभा द्वारा परामर्शदातृ समिति की सिफारिशें तथा सरदार पटेल द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव को स्वीकार करने के विषय में विचार करते समय दो प्रश्न उठते हैं, जो मेरे विचार में सभा को अपने आप से पूछने चाहियें। पहला यह है: जब हम कहते हैं कि हम असाम्प्रदायिक राज्य स्थापित करना चाहते हैं तो क्या हम सच्चे हैं? दूसरा प्रश्न यह है कि क्या हम एक ही राष्ट्र चाहते हैं? यदि हमारा विचार असाम्प्रदायिक राज्य बनाने का है, तो यह अनिवार्य निष्कर्ष है कि हम धर्म के आधार पर अल्पसंख्यकों को मान्यता नहीं दे सकते। मेरे विचार में यही प्रबलतम युक्ति है कि धार्मिक वर्गों के लिये रक्षण समाप्त हो जाने चाहियें और ऐसा तत्काल ही होना चाहिये। जहां तक राष्ट्र के निर्माण का सम्बन्ध है, मैं मानता हूं कि प्रत्येक सम्प्रदाय में कुछ आर्थिक रूप से पिछड़े हुये वर्ग हैं और उनके लिये गत दिसम्बर में स्वीकृत निदेशक सिद्धांतों में उपबंध कर दिया गया है।

श्रीमान्, मैं अपनी सारी स्थिति स्पष्ट बता देना चाहता हूं और यह कह देना चाहता हूं कि वैयक्तिक रूप से मुझे राजनैतिक क्षेत्र में पिछड़े हुये वर्गों के लिये रक्षण पर अत्यधिक आपत्ति है। मैं मानता हूं कि वे हमारी सहानुभूति के पात्र हैं और उन्हें आर्थिक संरक्षणों की आवश्यकता है, किन्तु मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि वे राजनैतिक संरक्षण

क्यों मांगते हैं। मैं नहीं समझता कि पिछड़े हुये सम्प्रदाय का कोई व्यक्ति यह अनुभव क्यों करे कि जब तक वह अपना कोई विश्वस्त प्रतिनिधि न चुने तब तक विधान मंडल में उसकी शिकायतें पेश नहीं हो सकती। मेरे विचार में ऐसे रुख से पता चलता है कि उन्होंने अब तक अल्पसंख्यक जाति के सदस्य होने के नाते, राष्ट्र का अंग और भाग बन जाने का निश्चय नहीं किया है। फिर भी मैं अपने नेताओं की बुद्धिमता के समक्ष सिर झुकाता हूं और प्रस्ताव का समर्थन करता हूं, केवल इसलिये कि मुझे आशा है कि सभा पंडित ठाकुरदास भार्गव के संशोधन को स्वीकार कर लेगी, जिसके अनुसार ये रक्षण एक सुनिश्चित कालावधि तक ही रहेंगे और हम एक ही बार ऐसी व्यवस्था कर देंगे कि जब यह संविधान प्रवर्त्तन में आये उसके दस वर्ष पश्चात् वे समाप्त हो ही जायेंगे।

श्रीमान्, जब गत जनवरी में संविधान सभा का विघटन हुआ, तब यद्यपि मुझे अपने घर पर बहुत आवश्यक कार्य था तब भी मैं जान बूझकर यहां ठहरा था, क्योंकि रक्षणों की समाप्ति के इस प्रश्न पर मैं देश की भावनाओं को जानना चाहता था। यह मेरे जीवन का स्वप्न था, जब से कि मेरी माता जी ने मुझे स्पष्ट बताया था कि मुझे दो कार्य करने हैं। मैंने उनके चरण स्पर्श करके उन दो कर्त्तव्यों को पूरा करने का वचन दिया। एक यह थी कि जब तक मुझ में जीवन है तब तक मद्यमान के विरुद्ध प्रचार करूं और दूसरा वह कि साम्प्रदायिक विचारों को समाप्त करने का प्रयत्न करूं। यद्यपि साधारण माने में यह शिक्षित स्त्री नहीं थी किन्तु उन्होंने देखा था कि मिन्टो-मोरले सुधार योजना से राष्ट्रीय जीवन में कितना संघर्ष उत्पन्न हो चुका था, जिससे कि अमुस्लिमों को हमारे मुस्लिम भाइयों से पृथक् कर दिया गया था। उन्होंने मुझसे वायदा करवाया था कि यदि मैं कभी सार्वजनिक अथवा राजनैतिक क्षेत्र में उतरूं तो मुझे इस साम्प्रदायिक निर्वाचक मंडलों की प्रणाली को समाप्त कराने के लिये तन मन से लग जाना चाहिये। मैं आभारी हूं कि ईश्वर ने मेरे जीवन की रक्षा की है जिससे कि नवीन शास्त्र (नये टेस्टामेंट) में उल्लिखित पैगम्बर के समान में भी गा सकता हूं:

> ''प्रभो, अब अपने दास को शान्ति से जाने दीजिये क्योंकि मेरी आंखों ने आपकी मुक्ति को देख लिया है।''

अत: मैंने देश के विचारों को जानने का प्रयत्न किया। मैं सभा को बता देना चाहता हूं कि इसमें भारत भर में राष्ट्रीय ईसाइयों को दस वर्ष तक भारी अविचल कार्य करना पड़ा है। मैंने एक प्रश्नावलि भेजी और अपने लोगों को 42 पत्र भेजे जिनमें से 35 के उत्तर प्राप्त हुये हैं। मैंने उनके उत्तरों को मिलाकर एकत्र किया और मैंने देखा कि अन्य लोगों के अतिरिक्त राष्ट्रीय ईसाइयों द्वारा भी पूछताछ की गई थी तो हिन्दुओं, मुस्लिमों, सिक्खों और अनुसूचित जातियों के मित्र थे। एकत्रित रूप में उनके उत्तरों से निम्न निष्कर्ष निकलते हैं।

जहां तक जनसाधारण का सम्बन्ध है मेरे मित्रों ने एक स्वर से कहा कि जनसाधारण रक्षणों को नहीं चाहते। वे चाहते हैं भोजन, वस्त्र, अपने सिरों को छिपाने के लिये स्थान, डाक्टरी सहायता और अच्छी सड़कें। उनकी तो ये ही मांगें हैं। जब उनसे विशेष रूप से पूछा गया कि वे स्थान रक्षण चाहते हैं या नहीं, तो प्रत्येक ने यही उत्तर दिया ''हम जानते हैं कि हम विधान मंडलों में कभी भी नहीं जा सकेंगे, हमें रक्षणों में कोई रुचि

[डा. एच.सी. मुखर्जी]

या मतलब नहीं है''। इस बात में सब प्रकार के लोग एकमत थे। फिर निम्न मध्यवर्त्ती श्रेणी के लोगों से उत्तर प्राप्त हुये जोकि अपनी आजीविका के लिये सेवावृत्ति पर निर्भर करते हैं। उनकी प्रतिक्रिया यह थी कि यदि किसी प्रकार का रक्षण हो तो वे सेवाओं में ही रक्षण चाहते हैं। श्रीमान्, मेरे विचार में, यह रक्षण की मांग उच्च मध्यवर्त्ती श्रेणी द्वारा की जाती है जिनकी राजनीतिक आकांक्षायें हैं। फिर मैंने एक और प्रश्नावली भेजी जिसमें मैंने पूछा कि स्थान-रक्षण की मांग किस उद्देश्य से की जाती है। दो उद्देश्य बताये गये। मेरे मित्रों के विचार से सर्वप्रथम और सबसे महत्त्वपूर्ण उद्देश्य यह है कि अधिकांश व्यक्तियों की राजनैतिक आकांक्षायें हैं—वे सत्ता के पीछे दौड़ते हैं, पदों के पीछे दौड़ते हैं और वास्तव में वे लोग अपना निजी स्वार्थ साधने के लिये विभिन्न विधान मंडलों में अपनी स्थिति का उपयोग करना चाहते हैं। श्रीमान्, मैं कहता हूं कि ऐसे व्यक्तियों की स्वतंत्र भारत में कोई आवश्यकता नहीं है। किन्तु यह स्वीकार किया गया था कि कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जो वास्तव में अपनी जातियों के भविष्य के विषय में चिन्तित हैं। ऐसे व्यक्ति विधान मंडल में इसलिये आना चाहते हैं कि वे समझते हैं कि वे अपने वर्ग के हितों का संरक्षण कर सकते हैं। ऐसे व्यक्तियों का मैं आदर करता हूं। किन्तु हमने विविध मूलाधिकार पारित कर दिये हैं जो धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक संरक्षणों को प्रत्याभूत करते हैं और वे संरक्षण न्याय हैं, उन संरक्षणों पर न्यायालय निर्णय कर सकता है; अत: मेरे विचार में ऐसे वर्गों के लोगों की उपस्थिति अपेक्षित नहीं है। फिर जब मैं उस निदेशक तत्व पर विचार करता हूं कि सामाजिक तथा आर्थिक रूप में पिछड़े हुये वर्गों के साथ न्याय किया जायेगा, तो मुझे ख्याल होता है और भरोसा होता है कि उनके साथ न्याय किया ही जायेगा। मेरे विचार में अनुसूचित जातियों को भी प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं है। किन्तु जैसा कि मैं कह चुका हूं, मैं अपने नेताओं की बुद्धिमानी के समक्ष नतमस्तक हूं, अतएव मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

अब प्रश्न यह है: क्या बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर विश्वास किया जा सकता है? बहुसंख्यक जाति ने प्रत्येक अल्पसंख्यक के प्रति उदारता दिखाई है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है। श्रीमान्, मैं आपकी अनुमति से सभा को बताना चाहता हूं कि जब लगभग दो मास तक मैं उस कुर्सी पर बैठा था जिस पर कि आज आप आसीन हैं, तो मैंने जानबूझकर यह परीक्षण किया था कि क्या हम बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर विश्वास कर सकते हैं। मेरे मुस्लिम, मेरे सिख और अनुसूचित जातियों के मित्र मेरे साथ सहमत होंगे कि मैंने उन्हें अपनी भावनायें व्यक्त करने का प्रत्येक अवसर दिया था और यह बहुसंख्यक जाति की अनुमति से, उनकी मौन अनुमति से किया गया था। मैं सभा को यह भी बता सकता हूं कि इन दो मासों में, लगभग प्रतिदिन विदेशी पर्यवेक्षक आते थे और उनमें से कुछ पत्रकार थे और अन्य लोग, जिन्हें धार्मिक और शिक्षा सम्बन्धी कार्य में रुचि थी, प्रतिदिन मेरे घर आकर मुझे पूछा करते थे, ''क्या आपको पूरा भरोसा है कि बहुसंख्यक जाति न्याय करेगी?'' मैंने कहा, ''हां, बिल्कुल, मेरा तो यही ख्याल है; किन्तु मैं चाहता हूं कि आप स्वयं देखिये और अपने निष्कर्ष निकालिये।''। एक स्वतंत्र अमरीकी पत्रकार था जिसने मुझे श्री विन्स्टन चर्चिल के मानचेस्टर भाषण का उद्धरण दिया था जिसमें उन्होंने कहा था कि ब्राह्मण लोग

'मिल' और 'बेन्थम' की बाते करते हैं और फिर भी भारत में अपने अनुसूचित जातियों के भाइयों को स्वतंत्रता देने से इंकार करते हैं। मैंने उसे बताया कि अनुसूचित जातियों के प्रत्येक सदस्य को अपनी शिकायतें पेश करने का अधिकार है। उसी दिन श्री नागप्पा और श्री कक्कन ने सदन में अपनी शिकायतें रखीं और कोई भी सवर्ण हिन्दू नहीं था जिसने उन शिकायतों के अस्तित्व से इंकार किया हो। उस दिन की कार्यवाही के अन्त में, दो तीन सवर्ण हिन्दू खड़े हुये, जिन्होंने उन सब शिकायतों को स्वीकार करते हुये यह वचन दिया कि उन निर्योग्यताओं को हटाने के लिये सब प्रयत्न किये जाने चाहियें।

श्रीमान्, इन बातों से पता चलता है कि अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों से डरने की कोई बात नहीं है। मुझे अपने अनुभव से यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि अल्पसंख्यकों के लिये यही बुद्धिमत्ता का मार्ग है कि वे बहुसंख्यकों पर भरोसा करें और यदि वे इस देश में शान्ति और सम्मानपूर्वक रहना चाहते हैं तो उन्हें सद्भावना प्राप्त करनी चाहिये। अब तक हमारा रुख सहायतापूर्ण नहीं रहा है। मैं विस्तार की बातों में नहीं जाना चाहता, किन्तु सब यह स्वीकार करेंगे कि अल्पसंख्यकों का रुख जरा भी सहायतापूर्ण नहीं रहा है। हमें स्मरण रखना चाहिये कि हमने राष्ट्रीय आंदोलन में रोड़ा अटकाने के लिये कितनी बार पीछे से प्रभाव डाला। मैं इससे अधिक कुछ नहीं कहूंगा। बहुसंख्यकों को मैं कहता हूं, ''हम सदा के लिये अच्छी तरह से और न्यायपूर्वक हमारा ध्यान रखने का भार आपके कंधों पर डाल रहे हैं।'' भगवान ने बहुसंख्यक सम्प्रदाय को यह अवसर दिया है कि वास्तविक कार्य द्वारा, सच्चे उदाहरण द्वारा यह सिद्ध कर दें कि जो कुछ कहा गया है वह सत्य है और व्यक्तिगत रूप से मुझे सकारण विश्वास है कि वे सफल सिद्ध होंगे।

***अध्यक्ष:** मैं कह सकता हूं कि मेरे पास फिर बोलने के इच्छुक सदस्यों के पास से चिटें आई हैं। किन्तु मैं उन चिटों पर नहीं चलूंगा; मैं अपनी आंखों पर काम लूंगा।

***बेगम ऐजाज रसूल** (युक्तप्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, माननीय सरदार पटेल ने अल्पसंख्यक सम्प्रदायों के प्रतिनिधित्व के विषय में जो प्रस्ताव पेश किया है, मैं उसका हृदय से समर्थन करने के लिये आई हूं। श्रीमान्, मुझे खेद है कि मुझे मद्रास के श्री इस्माइल के संशोधन का विरोध करना पड़ता है। उनके संशोधन का सारांश यह है कि पृथक् निर्वाचक मंडलों को रहने दिया जाये। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं आरम्भ से ही यह समझती हूं कि लौकिक राज्य में पृथक् निर्वाचक मंडलों का कोई स्थान नहीं है। अतएव संयुक्त निर्वाचक मंडलों के सिद्धांत को स्वीकार करने के पश्चात् अल्पसंख्यकों के लिये स्थान रक्षण मुझे व्यर्थ और अर्थहीन दिखता है। जो अभ्यर्थी हिन्दुओं और मुस्लिमों के संयुक्त मतों से चुना जाये वह सम्भवत: केवल मुसलमानों के ही दृष्टिकोण को पेश नहीं कर सकता और इसलिये यह स्थान रक्षण सर्वथा तथ्यहीन है। मेरे विचार में रक्षण एक स्वनाशक शस्त्र है जो सदा के लिये अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों से दूर कर देता है। यह अल्पसंख्यकों को कोई अवसर ही नहीं देता कि वे बहुसंख्यकों की सद्भावना प्राप्त कर सकें। इससे पार्थक्य और सम्प्रदायवाद की भावना बनी रहती है जिसे एक ही बार सदा के लिये मिटा देना चाहिये। यह रक्षण केवल दस वर्षों के लिये था और मेरे विचार में हमारे देश के जीवन में यह दस वर्ष सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और सम्प्रदायों में मेल कराने के लिये प्रत्येक प्रयास किया जाना चाहिये।

[बेगम ऐजाज रसूल]

श्रीमान्, यह एक आधार है जिस पर कि मैं माननीय सरदार पटेल के प्रस्ताव का समर्थन करती हूं।

मेरे समर्थन करने का दूसरा कारण यह है कि अभी तक भारत के सम्प्रदायों में पृथकत्व की भावना पाई जाती है। यह मिट जानी चाहिये। मेरा ख्याल है कि यह अल्पसंख्यकों के हित में है कि वे बहुसंख्यक जाति में विलीन होने का प्रयत्न करें। इससे अल्पसंख्यकों को हानि नहीं होने वाली है, मैं उन्हें यह विश्वास दिला देती हूं, क्योंकि आगे चलकर यह उन्हीं के हित में है कि वे बहुसंख्यकों की सद्भावना प्राप्त करें। मेरे विचार में यह आवश्यक है कि इस देश में रहने वाले मुस्लिम अपने आपको पूर्णतया बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सद्भावना पर छोड़ दें, पृथकत्व की भावनाओं को त्याग दें और सच्चा लौकिक राज्य बनाने में अपना पूरा बल लगा दें।

श्रीमान्, मैं पिछले दो वर्षों की घटनाओं के इतिहास को नहीं लूंगी। वह बहुत दु:खद इतिहास है और कोई इस बात से इन्कार नहीं करेगा कि जो कुछ घटनायें हुई हैं उनमें इस देश के रहने वाले मुसलमानों को सबसे अधिक दु:ख उठाना पड़ा है। केवल उनके जीवन और सम्पत्ति ही जोखम में नहीं रहे हैं और असुरक्षित नहीं रहे हैं, बल्कि उनका सम्मान ही जोखम में पड़ गया और उनकी वफादारी पर ही संदेह किया जाने लगा। इससे उन्हें बहुत निराशा और मानसिक चिन्ता रही है। हम भूत को भुला देना चाहते हैं और हम यह चाहते हैं कि एक नया अध्याय आरम्भ करना चाहिये जिससे इस देश में रहने वाले समस्त सम्प्रदाय सुख और सुरक्षा पूर्वक रह सकें। मुस्लिमों के मस्तिष्क में कुछ आशंका है कि स्थान रक्षण हट जाने के पश्चात् वे अपनी जनसंख्या के अनुपात से विधान मंडलों में स्थान प्राप्त नहीं कर सकेंगे। मेरे विचार में यह आशंका निर्मूल है क्योंकि मेरे विचार में जब हम बहुसंख्यक सम्प्रदाय के सम्मान पर सब कुछ छोड़ देते हैं, तो वे अपनी साख और सम्मान बनाये रखने के लिये अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के सदस्यों को केवल उनकी जनसंख्या के आधार पर ही नहीं वरन् शायद अधिक संख्या में चुनेंगे। मैं कल्पना नहीं कर सकती कि भविष्य में कोई राजनैतिक दल मुसलमानों की अवहेलना करके अपने अभ्यर्थी खड़े कर सकता है। मुसलमान इस देश की जनसंख्या के एक बहुत बड़े अंग हैं। मैं नहीं समझती कि कोई राजनैतिक दल उनकी उपेक्षा कर सकता है, विशेषत: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तो ऐसा कर ही नहीं सकती, जो सदा अल्पसंख्यकों की रक्षा का दावा करती रही है। श्रीमान्, मेरे विचार में हमें मुसलमानों को इस देश में लौकिक लोकतंत्रात्मक राज्य की स्थापना के लिये ही नहीं, वरन् उसको सुदृढ़ बनाने के लिये मार्ग तैयार करना चाहिये। ऐसा करने का हमारे लिये केवल यही उपाय है कि हम अपने रक्षणों का परित्याग कर दें और बहुसंख्यकों को यह दिखा दें कि हमें उनमें पूरा विश्वास है। तब ही मेरे ख्याल में बहुसंख्यक अपने उत्तरदायित्व को समझेंगे।

श्रीमान् मैं चाहती हूं कि मेरे मुस्लिम मित्र इस स्थिति की कल्पना करें यदि मुस्लिमों के लिये स्थान रक्षण रहता है तो यह बहुसंख्यक जाति की ओर से दान के समान होगा। वे कहेंगे 'हम उन्हें इतने स्थान दे दें।' हमें स्थान मिल जायेंगे, किन्तु उन स्थानों को देने में बहुसंख्यकों की ओर से अधिक सद्भावना नहीं होगी पृथकत्व की भावना रहेगी—किन्तु

यदि हम रक्षण प्राप्त न करने के लिये सहमत हो जायें, तो उस सम्प्रदाय के और निर्वाचन लड़ने वाले दल के सम्मान तथा प्रतिष्ठा की परीक्षा होगी और मैं नहीं समझता कि कोई दल अल्पसंख्यकों की, विशेषत: मुस्लिमों की उपेक्षा कर सकता है या करने का साहस कर सकता है। ऐसी स्थिति में मैं कल्पना करती हूं कि हिन्दू केवल मुस्लिमों के ही पास नहीं, वरन् अपने ही भाइयों के पास जायेंगे तथा उनसे मुसलमानों को मत देकर उस निर्वाचन मंडल से मुस्लिम अभ्यर्थी को चुनने के लिये कहेंगे। इनमें क्या बात अधिक अच्छी होगी, मैं जानना चाहती हूं: यह स्थानों का रक्षण जिससे कि दोनों सम्प्रदायों में विभाजन रहता है, या हिन्दुओं के बहुमत से चुना जाना, इसलिये नहीं कि हमारे लिये एक स्थान रक्षित था, वरन् इसलिये कि हमारे हिन्दू भाइयों ने हिन्दुओं के पास जा-जा कर मुस्लिमों को चुनने की प्रार्थना की थी? अतएव मेरे विचार में यह दोनों के हितों में है कि ऐसा हो और यही उपाय है जिससे कि दोनों सम्प्रदायों में सद्भावना तथा मैत्री उत्पन्न की जा सकती है। विश्वास से विश्वास की उत्पत्ति होती है और जब हम बहुसंख्यकों के हाथ में एक पवित्र न्यास दे देते हैं—तो यह निश्चित है कि वे अपने उत्तरदायित्व को समझेंगे।

श्रीमान्, मैं युक्त प्रान्त की रहने वाली हूं जहां भारत के सब प्रान्तों से अधिक मुसलमान हैं। मैंने मुस्लिम जनसाधारण में, पुरुषों और स्त्रियों में, दस वर्ष काम किया है, इसलिये मैं उनके विचारों को कुछ जानने का दावा कर सकती हूं। मुस्लिम शिक्षा की दृष्टि से और आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़े हुये हैं किन्तु जहां तक राजनीतिक जागृति का सम्बन्ध है वे आज बहुत चेतन हैं और कुछ समय से ऐसे ही है। मैं कह सकती हूं कि युक्त प्रान्त के मुस्लिम वस्तुस्थिति को भली प्रकार समझते हैं। वे समझ गये हैं कि बदली हुई परिस्थितियों में उन्हें अपना रुख बदल लेना चाहिये। अत: मेरे विचार में आज मैं जो बात कह रही हूं वह सर्वथा उनके हित में हैं और मैं जानती हूं कि युक्त प्रान्त के अधिकांश मुसलमान इस मामले में मेरे साथ हैं।

श्रीमान्, एक मित्र ने कल मुझे कहा था कि मुस्लिम यथार्थदृष्टा हैं। मैं सर्वथा सहमत हूं। मेरे विचार में वे बहुत यथार्थवादी लोग हैं। वे रूढ़िवादी नहीं हैं और उनके रूढ़िगत विचार नहीं हैं। मुस्लिम इतिहास से पता लगेगा कि वे सदा समय के अनुसार चलते रहे हैं। अत: यदि हम आज मुस्लिम सम्प्रदाय के लिये स्थान-रक्षण के उन्मूलन की मांग करते हैं तो मेरे विचार में हम सर्वथा ठीक मार्ग पर हैं और परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार चलना चाहते हैं।

श्रीमान्, जो मुसलमान पाकिस्तान जाना चाहते थे वे जा चुके हैं। जिन्होंने यहां रहने का निर्णय किया है वे बहुसंख्यक सम्प्रदाय के साथ मित्रतापूर्वक रहना चाहते हैं और समझते हैं कि उन्हें यहां के वातावरण और परिस्थितियों के अनुसार अपने जीवन को ढालना चाहिये। मैं यह नहीं कहती कि उन्हें इस देश में रहने वाले अन्य लोगों की इच्छाओं के अनुसार ही बदलना होगा। श्रीमान्, हम यह नहीं चाहते कि हमें मुस्लिमों के रूप में कोई विशेष रियायत मिले किन्तु हम यह भी नहीं चाहते कि हमारे विरुद्ध कोई विभेद किया जाये। इसी कारण मैं कहती हूं कि इस महान् देश के राष्ट्रीक होने के नाते हम यहां के रहने वाले लोगों की आकांक्षाओं और आशाओं में भागीदार हैं किन्तु साथ ही हम यह आशा करते हैं कि हमारे साथ सम्मान और न्याय से संगत तरीके से बर्ताव किया जाये।

[बेगम ऐजाज रसूल]

श्रीमान्, कभी-कभी मुसलमानों की वफादारी को चुनौती दी गई है। मुझे खेद है कि यह बात मुझे उठानी पड़ी है, क्योंकि मेरे विचार में इसकी चर्चा करने का यह ठीक अवसर है। मैं नहीं समझती कि वफादारी और धर्म का क्या सम्बन्ध है। मेरे विचार में जो लोग राज्य के हितों के विरुद्ध काम करते हैं और विध्वंसक कार्यवाही में भाग लेते हैं वे निष्ठाहीन हैं, चाहे वे हिन्दू हों, चाहे मुसलमान हों अथवा किसी अन्य जाति के हों। जहां तक इस बात का सम्बन्ध है, मेरे विचार में मैं कई हिन्दुओं से अधिक निष्ठावान हूं, क्योंकि उनमें से कई लोग विध्वंसक कार्यवाहियों में लगे रहते हैं, किन्तु मेरे हृदय में सबसे अधिक अपने देश का ही हित है। मेरे ख्याल में ऐसा ही मैं उन मुसलमानों के विषय में कह सकती हूं जिन्होंने यहां रहने का निश्चय किया है। वे केवल संघर्ष और झगड़े से बचना चाहते हैं, सुरक्षितता चाहते हैं, अपनी मानसिक वृत्ति को उसी प्रकार विकसित करना चाहते हैं। श्रीमान्, यह बहुसंख्यकों का काम है कि वे अल्पसंख्यक जातियों के मन में भरोसे, सद्भावना और सुरक्षितता की भावना उत्पन्न करें। तब ही निष्ठा उत्पन्न हो सकती है, क्योंकि निष्ठा तो लोगों की मानसिक स्थिति से ही उत्पन्न होती है। केवल कहने से ही उत्पन्न नहीं होती। अतः मेरा ख्याल है, श्रीमान्, कि यह प्रस्ताव पेश करके सरदार पटेल ने उचित किया है, क्योंकि वे विविध सम्प्रदायों को मिल जाने का अवसर दे रहे हैं।

श्रीमान्, एक बात और है। कुछ ऐसे हिन्दू और मुसलमान भी हैं जो समझते हैं और चिन्तित हैं कि अल्पसंख्यकों के लिये रक्षण समाप्त हो जायेगा तो उनके कुछ स्थान कम हो जायेंगे। मुझे खेद है कि वे ऐसी बात सोचते हैं। रक्षणों के समाप्त होने से जो लाभ हैं वे उन अलाभों से अधिक हैं जो कुछ स्थानों के छिप जाने से होंगे। मैं तो स्थानों के कम हो जाने की कल्पना ही नहीं करती क्योंकि, जैसे कि मैं कह चुकी हूं, दल अपने सम्मान और साख के लिये ही जनसंख्या के आधार से अधिक अभ्यर्थी खड़े करेंगे जिससे कि उचित संख्या में लोगों का चुना जाना निश्चित हो जाये। आजकल प्रत्येक बात पर लोकमत का प्रभाव पड़ता है और भारत का लौकिक लोकतंत्रात्मक राज्य बनाने का घोषित उद्देश्य है अतः वह इस आधार पर कोई शिकायत नहीं रहने देगा। अतः मैं अनुभव करती हूं कि अल्पसंख्यकों, विशेषतः मुसलमानों की कुछ भी हानि नहीं होने वाली है। हमारे हिन्दू मित्र यह सोच सकते हैं कि इस आधार पर उन्हें कुछ स्थान खोने पड़ेंगे। मेरे विचार में वे गलत तरीके से सोच रहे हैं। यह सत्य है कि अब बहुसंख्यकों पर बहुत महान् उत्तरदायित्व आ पड़ा है और अब उन्हें यह देखना है कि मुसलमान और अन्य अल्पसंख्यक अपनी जनसंख्या के अनुसार चुने जाते हैं किन्तु यह उत्तरदायित्व बहुसंख्यकों का है। मेरे विचार में इससे दोनों सम्प्रदायों में इतना सामंजस्य तथा सद्भावना हो जायेगी कि यह जोखम तो उठानी ही चाहिये। जो मुसलमान यह समझते हैं कि इससे उन्हें हानि होगी, मैं उनसे कहती हूं कि इससे हानि नहीं होगी क्योंकि इससे दोनों सम्प्रदायों में अधिक अच्छे सम्बन्ध उत्पन्न हो जायेंगे। यदि मुसलमानों से कुछ स्थान छिन भी जायें, तो भी मेरे विचार में उन्हें वह त्याग कर देना चाहिये क्योंकि उससे वे बहुसंख्यकों की सद्भावना प्राप्त कर लेंगे।

श्री लारी ने अनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत का योग्यता से और बलपूर्वक समर्थन किया है, किन्तु मैं उससे प्रभावित नहीं हुई। उन्होंने अन्य देशों का उदाहरण दिया है। वे देश राजनैतिक रूप में तथा शिक्षा की दृष्टि से बहुत आगे बढ़े हुये हैं। वे क्षेत्रफल में और जनसंख्या में बहुत छोटे हैं और मेरे ख्याल में भारत की उन देशों से तुलना करना साध्य वस्तु नहीं है। भारत में आनुपातिक प्रतिनिधित्व तथा एकल संक्राम्य मत के सिद्धांत को बहुत कम लोग समझते हैं। विधान मंडलों में भी यह समुचित प्रकार से कार्यान्वित नहीं हो सकती क्योंकि बहुत कम लोग हैं जो उसे कार्यान्वित करना चाहते हों। जहां लाखों मतदाता हों, वहां सामुहिक मतों का सिद्धांत सफलतापूर्वक नहीं चल सकता। क्योंकि निर्वाचक मंडल इतना विस्तृत और निरक्षर है कि उस पद्धति को कार्यान्वित करना असम्भव होगा। मेरे ख्याल में एक ही उपाय है कि संयुक्त निर्वाचक मंडल हों और स्थानों का रक्षण न हो। मेरे विचार में यही उपाय है जिससे कि हम साथ-साथ चल सकते हैं। हमें एक बार ही पृथकवत्व की भावना को छोड़ देना चाहिये और मेरे विचार में श्री लारी के प्रस्ताव से भी वह भावना बनी रहती है। श्रीमान्, मेरे विचार में संसार में और विशेषत: एशिया के जगत् में इतनी बुरी शक्तियां कार्य कर रही हैं कि स्थान रक्षणों जैसी ये छोटी-छोटी बातें शीघ्र ही भुला दी जायेंगी, क्योंकि आखिर आज संसार के मामलों के बड़े क्षेत्र में हमें देखना है कि भारत एशिया में अपना नेतृत्व बनाये रख सके और अपने आपको आक्रमणकारी तथा विध्वंसकारी शक्तियों से भी बचा सके। हम नहीं चाहते कि हमारे देश में ऐसी स्थिति हो जैसी कि चीन में है या जैसा कि वर्मा में खतरा है। अत: हमें अपने साधनों का भौतिक और नैतिक साधनों का विकास करना है। जिससे कि भारत समृद्ध और शक्तिशाली देश बन सके। अत: मेरे विचार में ये ऐसी बातें हैं जो पृष्ठभूमि में चली जानी चाहियें। हमें भारत को समृद्ध और शक्तिशाली बनाने के लिये अपनी समूची शक्ति लगा देनी चाहिये।

***सैयद मोहम्मद सादुल्ला** (आसाम : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं यह कहकर कोई गुप्त भेद नहीं खोल रहा हूं कि इस प्रश्न पर गत दिसम्बर में इस सभा के बहुत से मुस्लिम सदस्यों ने अनौपचारिक ढंग से बात की थी कि मुसलमानों को स्थान रक्षण से लाभ है या रक्षण-हीनता के व्यापक सरोवर में तैरने से लाभ है। उस समय हम कोई निर्णय नहीं कर सके और मेरे इस सुझाव को मान लिया गया कि हमें अपने निर्वाचक मंडलों से राय लेनी चाहिये। मैं नहीं जानता कि मेरे अन्य मित्रों ने अपने निर्वाचक मंडलों से पूछा या नहीं, किन्तु मैंने आसाम के विधान मंडल में अपने दल के मुस्लिम सदस्यों को पत्र लिखा था और उन्होंने मुझे मतैक्य से यह आदेश दिया कि मुसलमानों के लिये रक्षण मांगना चाहिये।

***मि. बी. पोकर साहब:** माननीय सदस्य का कहना है कि गत दिसम्बर में इस सभा के समस्त मुस्लिम सदस्यों ने इस प्रश्न पर विचार किया था। यह कथन सत्य नहीं है।

***सैयद मोहम्मद सादुल्ला:** श्री पोकर बहादुर को मैं कैसे समझा सकता हूं। शायद वे उस समय दिल्ली से अनुपस्थित थे जबकि हमने वह अधिवेशन किया था। श्रीमान्, आज मैं बहुत खेदात्मक दृश्य देख रहा हूं कि इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर भी मुट्ठी भर

[सैयद मोहम्मद सादुल्ला]

मुस्लिम सदस्य कोई निर्णय नहीं कर सके और वे इस सभा में परस्पर विरोधी मन्तव्य प्रकट कर रहे हैं, जिससे मुझे दु:ख होता है। अल्पसंख्यक सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति ने अपनी 11 मई की बैठक में एक बहुत महत्त्वपूर्ण निर्णय किया—मुझे भय है कि मेरे विचारानुसार वह निर्णय बहुत पर्याप्त तथ्यों या आंकड़ों के आधार पर किया गया। अल्पसंख्यक सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति के माननीय सभापति ने संविधान सभा को जो प्रतिवेदन पेश किया है उसमें राजनीति के बहुत सुन्दर सिद्धांत भरे हुये हैं और मैं व्यक्तिगत रूप से इस बात का समर्थन कर सकता हूं—क्योंकि मैं स्वयं अल्पसंख्यक समिति का सदस्य हूं और मैंने उसकी कई बैठकों में भाग लिया है, यद्यपि घरेलू झगड़े के कारण मैं इस मास की 11 तारीख को नहीं जा सकता था—पर मैं कह सकता हूं कि सरदार पटेल ने ठीक रास्ता अपनाया है और उन्होंने कई बार यह घोषणा की है कि संविधान सभा ने खुले सत्र में विविध अल्पसंख्यकों को रक्षण देने का पहले ही निर्णय कर दिया है, अत: उन अल्पसंख्यकों के सदस्यों पर ही यह निर्भर है कि वे स्पष्ट घोषित करें कि वे रक्षण नहीं चाहते। श्रीमान्, मेरे विचार में यही ठीक रास्ता है। मुझे स्मरण है कि पिछले दो अवसरों पर माननीय सरदार जी ने यह सिद्धांत निकाला था। श्रीमान्, दुर्भाग्यवश मैं देखता हूं कि 11 मई के अधिवेशन में, जबकि मुस्लिम अल्पसंख्यकों के केवल चार ही सदस्य उपस्थित थे, केवल एक न ही मेरे माननीय मित्र डाक्टर एच.सी. मुखर्जी के प्रस्ताव का वक्तृता द्वारा समर्थन किया था, दूसरे ने मत देकर उसका विरोध किया था; इस प्रकार एक के समर्थन को दूसरे ने अपने विरोध द्वारा बराबर कर दिया था और मंत्रिमंडल के एक माननीय सदस्य ने तटस्थ रहकर अच्छा ही किया था, मेरा मतलब मौलाना अबुल कलाम आजाद से है और एक मौलाना को तटस्थ देखकर दूसरे मौलाना भी जो कि सदस्य थे—यानी मौलाना हिफजुर रहमान भी तटस्थ रह गये। श्रीमान्, यदि हम आदरणीय सरदार पटेल के सिद्धान्त का तर्कसंगत निष्कर्ष निकाले तो उन्हें यह मामला मुस्लिम सदस्यों पर ही छोड़ देना चाहिये था कि मुसलमान रक्षण चाहते हैं या नहीं। हम मुट्ठी भर तो हैं ही और जैसे कि श्री लारी पहले ही कह चुके हैं सरदार पटेल सहज ही हम थोड़े से सदस्यों से कह सकते थे कि हम उनसे मिलकर अपना मत प्रकट करें। परामर्शदातृ समिति में जो प्रस्ताव पेश किया गया वह भी एक अमुस्लिम द्वारा ही किया गया था। मैं डाक्टर एच.सी. मुखर्जी का बहुत आदर करता हूं, उन्होंने बहुत त्याग किया है। वे उच्च कोटि के देशभक्त हैं और जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है वे मद्यपान आदि के उन्मूलन के लिये आश्चर्यजनक कार्य कर रहे हैं। वे इस महान् सभा के माननीय उपाध्यक्ष भी हैं, पर मैं कभी नहीं समझता कि वे मुसलमानों का प्रतिनिधित्व कर सकते हैं, अत: उन्हें जरा भी अधिकार नहीं है कि वे समिति में प्रस्ताव करें कि दस वर्ष मात्र के लिये सभा ने मुस्लिमों को जो रक्षण दिया है उसे भी हटा दिया जाये और मुझे यह देखकर खेद है कि यद्यपि प्रतिवेदन में सरदार पटेल ने कहा है कि:

> ''उस अधिवेशन में मैंने कहा था कि यदि किसी सम्प्रदाय विशेष के लोग सचमुच यह अनुभव करें कि स्थान-रक्षण की समाप्ति से उनके हित का अधिक अनुसेवन होता है तो उनके विचारों को स्वभावत: उचित वजन दिया जाना चाहिये और मामले पर पुनर्विचार होना चाहिये।''

उन्हें केवल मुस्लिम सदस्यों से ही परामर्श करने का युक्तियुक्त उपाय अपनाना चाहिये, किन्तु ऐसा किये बिना, उन्होंने बेगम ऐजाज रसूल के एकमात्र समर्थन के आधार पर, इस सभा से यह सिफारिश कर देना ठीक समझा कि मुसलमानों के लिये स्थान रक्षण समाप्त हो जाना चाहिये। व्यक्तिगत रूप से मुझे रक्षण का शौक नहीं है और जहां तक आसाम का सम्बन्ध है, रक्षण की कोई आवश्यकता नहीं है, किन्तु यदि हम समस्त भारत को लें तो हमें मानना ही पड़ेगा कि मुस्लिम अल्पसंख्यक न्यायपूर्वक रक्षण मांग सकते हैं और वे कम से कम कुछ समय के लिये तो रक्षण के योग्य हैं ही। हमें जनसंख्या के अनुपात पर विचार करना चाहिये। उड़ीसा में 1.5 प्रतिशत मुसलमान हैं, मध्यप्रदेश में 5 प्रतिशत, मद्रास में 7 प्रतिशत, बिहार में 11 प्रतिशत, युक्त प्रान्त में 14 प्रतिशत, आसाम में 14 प्रतिशत। यह भी कहा जा सकता है कि ''उड़ीसा में रक्षण से क्या होगा, जहां 1.5 प्रतिशत ही हैं?'' बात यह है कि किसी प्रान्त में रक्षण से बहुसंख्यक सम्प्रदाय को कोई हानि नहीं होगी, क्योंकि, यदि सारे मुस्लिम मिल जायें तो भी वे सभा में बहुसंख्यक सम्प्रदाय की इच्छा को नहीं बदल सकते, किन्तु मनोवृत्ति का प्रश्न आ जाता है। हम जानते हैं कि बंगाल विभाजन जैसा निश्चित तथ्य मनोवृत्ति, भावुकता और हठ के कारण बिगड़ गया। स्वतंत्र भारत ने अभी हाल ही में स्वतंत्रता प्राप्त की है और अब उसे एकीकरण की आवश्यकता है। उसे सब सम्प्रदायों के, चाहे वे छोटे हों या बड़े, अविश्वास को शान्त करना तथा संदेह दूर करना चाहिये। जैसा कि कई वक्ताओं ने कहा है, हम बहुसंख्यक सम्प्रदाय की कृपा पर निर्भर हैं। मैं माननीय सरदार पटेल से सहमत हूं कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय को ऐसी तरह बर्ताव करना चाहिये कि अल्पसंख्यकों को सांविधानिक संरक्षणों की आवश्यकता ही अनुभव न हो। इसी प्रकार मैं अपने प्रत्येक मुस्लिम मित्र से, जोकि इस समय भारत अधिराज्य का अधिवासी है, प्रार्थना करता हूं कि वह राष्ट्र और देश के हितार्थ दृढ़ निष्ठा रखें और पूर्ण सहयोग प्रदान करें। हम 1906 से पृथक् निर्वाचक मंडल पद्धति के अधीन पले हैं। बुरा कहिये चाहे अच्छा, हमें इस पद्धति के अनुसार चलने की आदत पड़ गई है। (*बाधा*)। एक सहयोगी की ओर से बाधा डाली गई है, वे स्वयं पृथक् निर्वाचक मंडल के ही फलस्वरूप यहां हैं। वे माननीय बाधक भूल जाते हैं कि इस सभा के सदस्य पृथक् निर्वाचक मंडलों के आधार पर चुने गये हैं। मुझे आसाम विधान मंडल के केवल मुस्लिम सदस्यों ने इस सभा के लिये चुना था। इसी प्रकार मेरे माननीय मित्र, मेरे सहयोगी प्रधानमंत्री और आसाम से आने वाले अन्य मंत्रीगण सब हिन्दू सदस्यों के ही मतों से चुने गये हैं। यदि यह पृथक् निर्वाचक मंडल नहीं तो और क्या हुये? किन्तु जैसा कि कहा गया है, समय बदल गया है। हमें लेना और देना आरम्भ करना होगा। मैं अपने मद्रासी मित्रों से प्रार्थना करूंगा कि वे पृथक् निर्वाचक मंडलों की बलपूर्वक युक्तियों का परित्याग कर दें। दूसरी ओर मैं बहुसंख्यक सम्प्रदाय से प्रार्थना करूंगा कि वे मुस्लिम अल्पसंख्यकों को सीमित कालावधि के लिये रक्षण प्रदान कर दें। पिछली वक्ता, मेरी माननीया मित्र बेगम एजाज रसूल ने कहा है कि रक्षणों से सम्प्रदाय को जरा भी लाभ नहीं होगा। मैं उनसे पूर्णतः सहमत हूं कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय के मतों के बिना मुस्लिम किसी ऐसे व्यक्ति को नहीं चुन सकते जिस पर उन्हें भरोसा हो, अभ्यर्थी हिन्दू तथा मुसलमान दोनों का विश्वासपात्र होना चाहिये, किन्तु रक्षणों का मुस्लिम सम्प्रदाय पर भारी मनौवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा। वे कम से कम ऐसा विश्वास कर लेंगे कि उनमें से कम से कम एक तो उनकी

[सैयद मोहम्मद सादुल्ला]

ओर से बोलने के लिये, उनके हितों का संरक्षण करने के लिये, विधान मंडल में है। मुसलमानों को इतने दान से भी क्यों वंचित करते हैं? समयानुसार कार्य करिये और दया कीजिये, अंग्रेजों के कवि ने कहा है ''कृपा दोहरा आशीर्वाद है''।

श्रीमान्, रक्षण का प्रश्न तो प्रतिवेदन में ही निहित है। आप अनुसूचित जातियों को रक्षण देना चाहते हैं, जिनकी संख्या भारत में मुस्लिम अल्पसंख्यक सम्प्रदाय से दुगनी है। आप कम से कम दो प्रान्तों में भारतीय ईसाइयों को राजनैतिक संरक्षण अथवा रक्षण देना स्वीकार करते हैं। आप आंग्ल भारतीय सम्प्रदाय के लिये भी यही स्वीकार करते हैं। यह प्रतिवेदन केवल मुस्लिमों के विषय में ही पिछले विनिश्चय और विद्यमान प्रस्ताव तथा इस प्रतिवेदन में अन्तर है। मैं सभा से अपील करता हूं कि जब सम्बद्ध अल्पसंख्यक संरक्षण चाहते हैं तो आप उन्हें इससे वंचित मत रखिये। यदि यह कहा जाये कि कुछ सदस्यों ने कहा है कि वे रक्षण नहीं चाहते तो यहां उपस्थित मुस्लिम सदस्यों के बहुमत को मान लेना चाहिये। यदि सदस्यों का बहुत यह कहे कि वे रक्षण नहीं चाहते तो मैं सबसे पहले बहुमत के समक्ष सिर झुका दूंगा।

एक बात और, फिर मैं समाप्त कर दूंगा। हम कहते हैं कि हम शक्तिशाली लोकतंत्रात्मक राज्य बनाना चाहते हैं। लोकतंत्र का यही आशय है कि अधिराज्य की जनता का प्रत्येक भाग यह अनुभव करे कि उनका देश के प्रशासन से सीधा सम्पर्क है। देश का प्रशासन दो भागों में विभक्त है। एक तो विधान मंडल है जो मंत्रिमंडल को चुनता है और दूसरा कार्यपालिका है जिसमें सरकारी नौकर हैं। यदि आप अल्पसंख्यकों का संरक्षण, किसी न किसी प्रकार, चाहे रक्षण द्वारा, अथवा श्री लारी के मतानुसार बहु-निर्वाचन क्षेत्रों तथा सामुहिक मतदान द्वारा, नहीं करते, तो लोकतंत्र कुतंत्र बन जायेगा। वह बहुत बुरा दिन होगा यदि भारत स्वतंत्र देश के रूप में अपने अस्तित्व के प्रारंभ में ही कुतंत्र बन जाये।

***माननीय सदस्यगणः** समाप्त करिये, श्रीमान्।

***अध्यक्षः** अभी बारह बजने में 20 मिनट हैं। मेरे पास चिटों पर बहुत से नाम हैं; किन्तु जैसा कि मैं कह चुका हूं, मैं चिटों की उपेक्षा करके अपने नेत्रों का ही प्रयोग करूंगा। जब मैं अपनी आंखों का प्रयोग करना चाहता हूं तब भी मुझे लगभग आधा दर्जन व्यक्ति अपने स्थानों पर खड़े हुए मिलते हैं एक सदस्य ने यह शिकायत लिख कर भेजी है कि वे मुझे दिखाई नहीं पड़ते। मेरे विचार में यह शिकायत कई अन्य सदस्यों को भी है और इस चिट का मुझ पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा। अतः मैं सभा की इच्छा जानना चाहता हूं कि क्या वे इस वाद-विवाद को कल तक जारी रखना चाहते हैं।

***कई माननीय सदस्यः** हां।

***अध्यक्षः** ऐसा प्रतीत होता है कि कई सदस्य इस वाद-विवाद को जारी रखना चाहते हैं। विषय महत्त्वपूर्ण है और मैं उनसे सहमत हूं अब हम वाद-विवाद जारी रख सकते हैं। कल मेरे विचार में, अधिक समय नहीं लगेगा।

***माननीय सदस्यगण:** कल का समुचा दिन, श्रीमान्।

***अध्यक्ष:** इसकी क्या आवश्यकता है? हमें अल्प कार्य करना है जो महत्त्वपूर्ण भी है। अत: मेरा विचार इस वाद-विवाद को कुछ समय तक सीमित करने का है, जिससे कि हम अगला प्रस्ताव ले सकें और तत्पश्चात् संविधान के मसौदे को ले सकें। पर, इस पर हम कल विचार करेंगे; आज हमारा विचार आगे बढ़ने का है।

***माननीय जेरोम डी'सूजा** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे विश्वास है कि इस सभा के माननीय सदस्य मुझसे सहमत होंगे कि हमारे समक्ष एक गम्भीर महत्त्व का विनिश्चय है, कि ऐसे प्रयोग को समाप्त कर दिया जाये जो हमारे देश के लिये गम्भीरतम परिणामों से पूर्ण है।

श्रीमान्, श्री लारी ने अपने विचारों की जो बलपूर्वक व्याख्या की है, उससे सबकी समझ में एक बात स्पष्टत: आ सकती है और वह यह है कि लोकतंत्र को कार्यान्वित करने में ऐसा कोई उपाय निकालना चाहिये जिससे कि अल्पसंख्यकों की अवहेलना या उपेक्षा न हो। हो सकता है यही बात उन लोगों के मस्तिष्क में भी रही हो जिन्होंने हमारे देश में साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का सिद्धांत लागू किया हो। उनके विचारों पर विचार करके यह निर्णय करना हमारा काम नहीं है, किन्तु अब यह नितान्त स्पष्ट है कि लोकतंत्र को इन गड्ढ़ों से बचाने के लिये, जब राजनैतिक विशेषाधिकारों को धार्मिक विभेदों पर आधारित अल्पसंख्यको से जोड़ा गया, तब राजनैतिक मामलों में एक बहुत गम्भीर और भयानक उलटफेर कर दिया गया। इसके परिणाम पिछले कुछ वर्षों के भारत के इतिहास पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखें हैं। इस देश के अधिकांश पर्यवेक्षकों के विचार में इसका फल हमारे देश का विभाजन है। अत: समस्त देश अब यह समझता है कि चाहे विरोध करने वाले लोगों को तत्काल कितनी ही असुविधा क्यों न हो, पर हमें दृढ़ निश्चय होकर इस उलटफेर से भिन्न मार्ग को अपनाना चाहिये और ऐसे पथ पर चलना चाहिये जिससे कि आगे चल-कर कभी भी हमारे देश के राजनैतिक जीवन में केवल धर्म पर आश्रित विभेद प्रवेश न कर सके।

श्रीमान्, भारत के राष्ट्रवादियों ने पृथक् निर्वाचक-मंडलों के सिद्धांत का सदा विरोध किया और मुझे विश्वास है कि वे एक समय संयुक्त निर्वाचक मंडलों के होते हुये रक्षण रखने के लिये जो उद्यत हो गये थे वह भी समझौते की भावना से ही किया गया था। मुझे विश्वास है, श्रीमान्, कि यदि इस उपबंध की स्वीकृति के समय वही स्थितियां होतीं जो आज हैं, तो प्राचीन व्यवस्था के इस छोटे से चिन्ह को बनाये रखने में अब से भी अत्यधिक हिच होती और बहुत ही कम मतैक्य होता। किन्तु जैसा कि कई पूर्व वक्ताओं ने स्पष्ट कर दिया है, हमारे देश में घटनाचक्र तथा लोकमत से यह आवश्यक हो गया है कि यह चिन्ता भी मिटा देनी चाहिये। उस घटनाक्रम के एक पहलू का तो डाक्टर मुखर्जी ने संकेत किया है, वह पहलू यह है कि हमारे संविधान के मूलाधिकार सम्बन्धी अध्याय में वैयक्तिक अधिकारों के लिये कितनी सम्पूर्णता, उदारता तथा व्यापकता से संरक्षण रखे गये हैं, किस प्रकार मूलाधिकारों को उच्चतम न्यायालय की शक्ति तथा क्षेत्राधिकार के अधीन रख दिया गया है और उन उपबंधों को इस सभा ने किस भावना से पारित किया।

[माननीय जेरोम डी'सूजा]

इस बात के साथ-साथ बहुसंख्यक सम्प्रदाय की ओर से सद्भावना की कई बातों से अल्पसंख्यकों को इतना विश्वास हो गया है कि आज माननीय सरदार पटेल द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव के समर्थन में भारी बहुमत होना निश्चित है। मैं इससे इन्कार नहीं करता कि कई विरोधी भी हैं। किन्तु देश के उत्तर तथा दक्षिण में हमारा जनता से सम्पर्क रहा है और मेरे ख्याल में मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि जहां तक ईसाइ सम्प्रदाय का सम्बन्ध है, प्राप्त पत्रों को देखते हुये और लोगों ने जो विचार सार्वजनिक रूप में प्रकट किये हैं उन्हें देखते हुये, मैं कह सकता हूं कि इस विनिश्चय के विषय में समस्त भारत डाक्टर मुखर्जी के साथ है कि स्थान-रक्षण नहीं होना चाहिये।

श्रीमान्, इस प्रस्ताव के समर्थन में मैं भारत में स्वस्थ राष्ट्रीयता के विकास के प्रश्न को नहीं उठाना चाहता। वह तो स्पष्ट कारण है ही। हमारे देश की दु:खद घटनाओं से यह प्रकट हो जाता है कि हमें साम्प्रदायिक पृथकत्व के पथ से दृढ़तापूर्वक मुंह मोड़ देना चाहिये। किन्तु, क्रियात्मक दृष्टिकोण से भी, उस अन्तिम चिन्ह में कुछ युक्तिहीन तथा परस्पर विरोधी बातें थीं जिन्हें हम पहले किसी समय स्थायी बनाना चाहते थे। हमें कहा गया था कि कुछ धार्मिक अल्पसंख्यकों और धार्मिक हितों के लिये उसी धर्म के अनुयायियों द्वारा प्रतिनिधित्व प्राप्त कराया जाये किन्तु ये प्रतिनिधि ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा चुने जाने थे जहां सम्भवत: अधिकांश निर्वाचक उस धर्म के अनुयायी नहीं होते। अब, श्रीमान्, या तो आप अल्पसंख्यकों के धार्मिक हितों के लिये प्रतिनिधित्व को स्वीकार कर लें और उन लोगों से अपने प्रतिनिधि चुनने के लिये कहें या आप धर्म के आधार पर प्रतिनिधित्व के समूचे सिद्धांत को त्याग दें और हमें ऐसी अस्पष्ट स्थिति में न रखें कि किसी विशेष हित के प्रतिनिधि उन लोगों द्वारा चुने जायें जो कि उस हित के अनुयायी नहीं हैं। रक्षणों में यही एक परस्पर विरोधी बात है, यही तर्कहीनता है जिसे हम हटाना चाहते हैं और जिसके लिये अब सभा यह कह सकती है कि वह मिट जानी चाहिये। अत: अब मुझे सभा से सानुरोध अपील करनी है कि सब प्रकार के विशेष संरक्षणों, विशेष स्थान-रक्षणों, पिछड़े हुये वर्गों के लिये विशेष सहायता देने का विचार अब धर्म के आधार पर नहीं करे, वरन् वैयक्तिक योग्यता के आधार पर, वैयक्तिक कमियों और आवश्यकताओं के आधार पर करे, नि:संदेह सामाजिक पृष्ठभूमि का ध्यान रखना चाहिये, किन्तु मुख्यत: वैयक्तिक गुणावगुण पर ही विचार करना चाहिये। किसी व्यक्ति की इसलिये सहायता की जानी चाहिये कि वह निर्धन है, उसके जन्म और पालनपोषण के कारण उसे सामाजिक, राजनैतिक और शैक्षणिक उन्नति करने का अवसर नहीं मिला है। अतएव इससे कोई प्रयोजन नहीं मिला है कि वह ईसाई है, अथवा मुसलमान है, अथवा हिन्दू है, अथवा ब्राह्मण है, अथवा अब्राह्मण है अथवा अनुसूचित जाति का है। सरकार, सचमुच में लोकतंत्रीय सरकार के समान, सब पिछड़े हुये वर्गों के प्रति पिता समान व्यवहार करते हुये उसकी सहायता वैयक्तिक आवश्यकताओं के आधार पर करेगी, और साम्प्रदायिक या धार्मिक वर्गीकरण के आधार पर नहीं। हमें पूरी आशा है कि इसी प्रकार नवीन भारत का लोकतंत्र यथेष्ट प्रकार से विकसित होगा और ऐसा विकास करके, हम दूसरों के लिये, जो कि शायद लोकतंत्र के सिद्धात को कार्यान्वित करने में सफल नहीं हुये हैं, उदाहरण रखेंगे, जो केवल हमारे ही लिये लाभदायक नहीं होगा, अपितु समस्त जगत् में सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति में सहायक होगा।

श्रीमान्, संरक्षण के इस अन्तिम चिन्ह का परित्याग करने में हम कोई जोखम नहीं उठा रहे हैं—वह अन्तिम चिन्ह जिस पर कि ईसाई और अन्य अल्पसंख्यकों ने आशा लगाई थी—जिन संरक्षणों का वचन दिया गया था और जो उन्हें मिलना अब तक निश्चित समझा जाता था। मैं यह कहने का साहस कर सकता हूं कि राष्ट्रीय नेता और बहुसंख्यक सम्प्रदाय ऐसा उत्तदायित्व ले रहे हैं, जिसकी गम्भीरता को, मुझे आशा है, वे पूरी तरह समझते हैं। सरदार पटेल ने बहुसंख्यक सम्प्रदाय के उत्तरदायित्व पर अत्यन्त गम्भीर शब्दों में बल दिया है। आज से यह देखना उनका कर्त्तव्य है कि समस्त सम्प्रदायों के लोगों को अभ्यर्थी चुनते समय न्यायपूर्ण अवसर मिले, और चुनावों में उनके साथ न्याय हो, पर शर्त यह है कि वे व्यक्तिगत रूप से योग्य हों, वे सामाजिक और राजनैतिक तौर पर प्रगतिशील हों और उनकी संस्था यह सभा को स्वीकार्य हों। अत: मै कह सकता हूं कि उन्हें चुनवाने का उत्तरदायित्व अल्पसंख्यकों के कंधों से हटकर बहुसंख्यकों के सिरों और कंधों पर जा पड़ा है। यदि मैं इस सभा वे रुख से पता लगा सकूं तो वे उसे स्वीकार करने के लिये तैयार हैं। हम उनके आश्वासन को स्वीकार करने के लिये इच्छुक हैं और हमें ऐसा करने में प्रसन्नता है, कि वे अपनी योग्यतानुसार अपनी प्रतिज्ञा की भावना पर और इस समझौते पर दृढ़ और सच्चे होंगे, जिससे कि हम और वे उस राजनैतिक प्रयोग के अन्त पर खुशी मनाने में एक हो सकें, जिसके कारण हमारे लोगों को इतना दु:ख पाना पड़ा है और अंत में भारतीय लोकतंत्र के निर्वाचित प्रतिनिधि उसे स्वतंत्र तथा इच्छापूर्ण मत से समाप्त कर रहे हैं। (*हर्षध्वनि*)

मैं इससे अधिक और कुछ नहीं कहूंगा। मुझे आशा है और मेरी प्रार्थना है कि जो भावना सरदार पटेल के भाषण तथा इस सभा की प्रतिक्रिया में व्याप्त रही है वही इस देश के राजनैतिक नेताओं और बहुसंख्यक संस्थाओं और जनता में भी व्याप्त रहे, हमारे महान् नेताओं ने बुद्धिमत्तापूर्वक तथा दृढ़तापूर्वक जिस लौकिक लोकतंत्र की नींव डाली है, उसके मार्ग पर चलकर, जाति और मत के विभेद से, मातृभूमि की सेवा में लग जायेगा। इस प्रकार मुस्लिम और ईसाई, हिन्दू और पारसी और आंग्ल-भारतीय सब कंधे से कंधा भिड़ाकर खड़े होंगे और हमारे सब लोगों की समृद्धि और सुख के लिये कार्य करेंगे और भारत के नये लोकतंत्र को उन शानदार सफलताओं तक पहुंचायेंगे, जो निश्चय से भगवान ने हमारे लिये नियत की हैं।

***श्री जगतनारायण लाल:** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव का समर्थन करने और श्री इस्माइल तथा श्री लारी के संशोधनों का विरोध करने के लिये आया हूं। वास्तव में इतने मुस्लिम मित्रों की और मेरे पूर्व वक्ता की वक्तृतायें सुनने के बाद, जिन्होंने कि स्वयं संशोधन का विरोध किया है, यह ज्यादा अपेक्षित तो नहीं था कि मैं भी इसका विरोध करने के लिये आऊं, किन्तु मैं केवल अपनी एक भावना को व्यक्त करने आया हूं जो यह है कि भारत विभाजन के कटु-अनुभव के पश्चात् भी, क्या इस सभा में या भारत में कोई भी ऐसा व्यक्ति शेष है जो पृथक् निर्वाचन मंडलों का विचार करे और आगे आकर उनका समर्थन करे। यह दु:ख की और आश्चर्य की भावना है जिसे मैं यहां व्यक्त किये बिना नहीं रह सकता। विगत के सब आश्वासनों के पश्चात् और पड़ौसी देश में जो कुछ हो रहा है उसे देखते हुये, यह राज्य एक लौकिक राज्य होगा, और

[श्री जगतनारायण लाल]

इसमें विश्वास, उपासना और विचारों की स्वतंत्रता होगी, और यहां राजनैतिक अधिकार प्रदान करने के प्रयोजनार्थ कोई धार्मिक विभेदों को मान्यता नहीं मिलेगी, यह सब देखते हुये, यह उचित प्रतीत नहीं होता और यह किसी सम्प्रदाय के लिये, किसी अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के लिये अच्छा भी नहीं होता कि वह आगे आकर किसी प्रकार के रक्षण की मांग करे।

श्री लारी ने आगे आकर सामूहिक मतदान की मांग की। उन्होंने सांविधानिक दृष्टान्तों के तीसरे भाग की चर्चा की। किन्तु उन्हीं सांविधानिक दृष्टान्तों से वे देख सकते थे—समय कम है, अन्यथा मैं उन भागों को पढ़कर सुनाता—कि सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ ने अनुच्छेद 123 द्वारा, स्विट्जरलैंड ने अनुच्छेद 49 द्वारा, जर्मनी ने अनुच्छेद 136 द्वारा, यूगोस्लोविया, फिनलैंड आदि सबने यह घोषणा कर दी है कि धर्म और धार्मिक विभेद का राजनैतिक अधिकारों से कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा। श्रीमान्, 1906 में जब से पृथक् निर्वाचक मंडल आरम्भ हुये थे, उसके अनुवर्ती वर्षों में, गोलमेज समम्लेन में और अन्त में विभाजन से पृथक् निर्वाचक मंडलों के कटु फल इतने सुविदित हो गये हैं कि उन्हें गिनाने की आवश्यकता नहीं है। अतः मैं नम्रतापूर्वक संशोधनों का विरोध करता हूं और कहता हूं कि जो आश्वासन दिये गये हैं कि भारत एक लौकिक राज्य होगा, उनके बाद रक्षणों के लिये कोई मांग नहीं होनी चाहिये। जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, कई लोगों की उनकी चर्चा है और विशेषतः एक पूर्ववर्ती वक्ता ने कहा है ''जब उन्हें मिल गया, तो हमें क्यों नहीं''? किन्तु मैं एक बार फिर कह देता हूं कि अनुसचित जातियों को धर्म के आधार पर रक्षण नहीं दिये गये हैं; वे हिन्दू सम्प्रदाय के अंग हैं और उन्हें स्पष्टतः आर्थिक, सामाजिक और शैक्षणिक रूप में पिछड़े हुए होने के कारण ही रक्षण दिया गया है। अतः वह उपमा यहां लागू नहीं होती। इन शब्दों के साथ मैं संशोधनों का विरोध तथा प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** बारह बजे हैं। सभा कल प्रातःकाल आठ बजे तक के लिये स्थगित रहेगी।

तत्पश्चात् सभा बृहस्पतिवार, 26 मई 1949 के 8 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

परिशिष्ट 'क'

भारतीय संविधान सभा

परिषद् भवन,
नई दिल्ली, 11 मई 1949।

प्रेषक:

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल,
सभापति, अल्पसंख्यकों, मूलाधिकारों, आदि सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति।

सेवा में:

अध्यक्ष महोदय,
भारतीय संविधान सभा।

प्रिय महोदय,

अल्पसंख्यकों, मूलाधिकारों, आदि सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति ने अपने 8 अगस्त 1947 के प्रतिवेदन में अल्पसंख्यकों के लिये कुछ राजनैतिक संरक्षणों की सिफारिश की थी। संविधान सभा ने उन्हें अपने अगस्त 1947 के सत्र में स्वीकार कर लिया था और वे संविधान के मसौदे के भाग 14 में रख दी गई हैं। इन सिफारिशों के अनुसार केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलों के समस्त निर्वाचन संयुक्त निर्वाचन मंडलों के आधार पर होने थे जिनमें कुछ निर्धारित अल्पसंख्यकों के लिये उनकी जनसंख्या के आधार पर स्थान रक्षित होने थे। यह रक्षण दस वर्षों की कालावधि के लिये होना था, जिसके पश्चात् स्थिति पर पुनर्विचार होना था। पासंग नहीं रखा गया था, किन्तु अल्पसंख्यक सम्प्रदायों के लोगों को, जिनके लिये कि स्थान रक्षित किये गये थे, सामान्य स्थानों के लिये खड़े होने का अधिकार मिलना था। जिन सम्प्रदायों के लिये स्थान रक्षित होने थे वे थे मुस्लिम, अनुसूचित जातियां और भारतीय ईसाई। अन्तिम जाति को केवल केन्द्रीय विधान मंडल तथा मद्रास और बम्बई के प्रान्तीय विधान मंडलों के सम्बन्ध में ही यह रक्षण मिलना था।

2. इस समय मैं आपको स्मरण कराना चाहता हूं कि समिति ने अपने प्रतिवेदन में लिखा था कि अल्पसंख्यक ''किसी भी प्रकार एकमत नहीं हैं कि, उनके अपने हित में, विधान मंडलों में विधि द्वारा रक्षण की आवश्यकता है या नहीं''। फिर भी समिति ने स्थानों के रक्षण की सिफारिश कर दी ''जिससे कि अल्पसंख्यक विधान मंडल में अपने प्रतिनिधित्व की संख्या पर निर्वाध संयुक्त निर्वाचन पद्धति के प्रभाव के विषय में आशंकित न अनुभव करें।''

3. जब सभा द्वारा उपरोक्त सिफरिशों पर विचार किया जा रहा था तब देश के विभाजन के फलस्वरूप ऐसी घटनायें घट रही थीं जिनमें पूर्वी पंजाब में अल्पसंख्यकों के अधिकारों के प्रश्न पर, विशेषत: जहां तक सिक्खों का सम्बन्ध है, विचार करना असम्भव हो गया। तदनुसार पूर्वी पंजाब का प्रश्न स्थगित कर दिया गया; और यह प्रश्न भी स्थगित

कर दिया गया कि क्या पश्चिमी बंगाल में अल्पसंख्यकों को आरक्षित स्थानों पर खड़ा होने का अधिकार दिया जाये।

4. परामर्शदातृ समिति ने अपनी 24 फरवरी 1948 की बैठक में एक विशेष उपसमिति पूर्वी पंजाब तथा पश्चिमी बंगाल की अल्पसंख्यक समस्याओं पर प्रतिवेदन करने के लिये नियुक्त की जिसमें मैं सभापति था तथा निम्न सदस्य थे:

माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू

माननीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद

श्री के.एम. मुन्शी, और

माननीय डाक्टर बी.आर. अम्बेडकर।

यह विशेष उपसमिति 23 नवम्बर 1948 को समवेत हुई तथा परामर्शदातृ समिति को प्रतिवेदन दिया। उस प्रतिवेदन की प्रति परिशिष्ट के रूप में यहां नत्थी है।

5. यह प्रतिवेदन परामर्शदातृ समिति की 30 दिसम्बर 1948 की बैठक में विचारार्थ प्रस्तुत हुआ। समिति के कुछ सदस्यों का ख्याल था कि परामर्शदातृ समिति ने 1947 में अपना प्रतिवेदन पेश किया था तब से लेकर स्थिति बहुत बदल चुकी है और स्वतंत्र भारत में और वर्तमान स्थिति में अब यह समुचित नहीं रहा है कि मुस्लिमों, ईसाइयों, सिक्खों या किसी अन्य धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिये कोई स्थान रक्षण रहे। यद्यपि पृथक् निर्वाचक मंडलों के उन्मूलन ने राजनीति में से बहुत सा विष मिटा दिया है, तदपि यह ख्याल है कि धार्मिक सम्प्रदायों के लिये स्थान-रक्षण से पृथकत्व की कुछ भावना उत्पन्न होती है और उस हद तक वे लौकिक लोकतंत्रात्मक राज्य के सिद्धांत के विरुद्ध है। डाक्टर एच.सी. मुखर्जी, श्री तजम्मुल हुसैन, श्री लक्ष्मीकांत मैत्र और कुछ अन्य सदस्यों ने इस आशय के प्रस्ताव भेजे थे कि संविधान सभा से यह सिफारिश की जाये कि भारत में विधान मंडलों में किसी सम्प्रदाय के लिये स्थान-रक्षण न हो। श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले के कथित प्रस्तावों में एक संशोधन की सूचना दी कि उक्त प्रस्ताव के प्रभाव से अनुसूचित जातियों को निकाल दिया जाये। उस अधिवेशन में मैंने कहा था कि यदि किसी सम्प्रदाय विशेष के लोग सचमुच यह अनुभव करें कि स्थान-रक्षण की समाप्ति से उनके हित का अधिक अच्छा अनुसेवन होता है तो उनके विचारों को स्वभावत: उचित वजन दिया जाना चाहिये और मामले पर पुनर्विचार होना चाहिये। साथ ही मैं इस बात के लिये चिन्तित था कि समिति में अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों को पर्याप्त समय मिलना चाहिये कि वे अपने लोगों के विचारों का अच्छी तरह पता लगायें और जो संशोधन पेश किये गये हैं उन पर पूरी तरह विचार करें, जिससे कि यदि कोई परिवर्तन किया जाये तो वह अल्पसंख्यकों की अपनी इच्छानुसार ही हो और उन पर बहुसंख्यकों की ओर से थोपा न जाये। तदनुसार समिति कोई निर्णय किये बिना ही स्थगित हो गई और 11 मई 1949 को पुन: समवेत हुई। उस अधिवेशन में डाक्टर एच.सी. मुखर्जी के प्रस्ताव पर परामर्शदातृ समिति के सदस्यों के अत्यधिक बहुमत का समर्थन प्राप्त हुआ। किन्तु, यह बात स्वीकार की गई कि अनुसूचित

*परिशिष्ट 'ख'

जातियों की विशेष स्थिति से यह अपेक्षित हो जाता है कि उन्हें पहले के निर्णय के अनुसार दस वर्ष के लिये रक्षण दिया जाये। तदनुसार परामर्शदातृ समिति में, एकमात्र मत के विरोध के साथ उक्त प्रस्ताव श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले द्वारा संशोधन रूप में, निम्न प्रकार पारित हो गया:

> ''कि अनुसूचित जातियों के अतिरिक्त अल्पसंख्यकों के लिये रक्षण की पद्धति को समाप्त कर दिया जाये।''

और यह भी निश्चय किया गया कि उक्त प्रस्ताव की किसी बात का प्रभाव विधान मंडलों में आदिम जातियों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उन सिफारिशों पर नहीं पड़ेगा जो उत्तर-पूर्वी सीमा (आसाम) आदिम जाति और पृथक्कृत क्षेत्र उपसमिति और पृथक्कृत तथा अंशत: पृथक्कृत क्षेत्र (आसामेतर) उपसमिति ने दी हैं। समिति ने यह भी निर्णय किया कि इस प्रस्ताव का विधान मंडलों में आंग्ल भारतीयों के प्रतिनिधित्व विषयक विशेष उपबंधों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

6. समिति ने सिक्ख प्रतिनिधियों द्वारा मतैक्य से रखे गये सुझाव को भी मान लिया कि पूर्वी पंजाब में निम्नलिखित जातियों, अर्थात् मजहबियों, रामदासियों, कबीरपन्थियों और सिकलीगरों को भी, जो कि अनुसूचित जातियों के समान ही निर्योग्यताओं से पीड़ित हैं, अनुसूचित जातियों की सूची में समाविष्ट कर लिया जाये, जिससे कि वे अनुसूचित जातियों को दिये गये प्रतिनिधित्व से लाभ उठा सकें। इस परिवर्तन तथा उपरोक्त प्रस्ताव के अधीन रहते हुए परामर्शदातृ समिति द्वारा नियुक्त विशेष उपसमिति के प्रतिवेदन को स्वीकार कर लिया गया।

7. उपरोक्त निर्णयों के फलस्वरूप आसाम और पश्चिम बंगाल में अल्पसंख्यकों के लिये रक्षित स्थानों के अतिरिक्त व्यापक स्थानों पर भी खड़े होने के अधिकार को हटा देने के सम्बन्ध में कई सदस्यों से जो प्रस्ताव प्राप्त हुए थे वे वापस ले लिये गये।

8. समिति इस बात को पूरी तरह समझती है कि एक बार जो निर्णय कर लिये जायें उन्हें हल्के से विचार के पश्चात् नहीं बदल देना चाहिये। किन्तु अगस्त 1947 से स्थितियां बहुत बदल गई हैं और समिति को यह संतोष है कि अल्पसंख्यकों का स्वयं यही ख्याल है कि समस्त देश के हित के अतिरिक्त उनके स्वयं के हित में धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिये वैधानिक स्थान-रक्षण समाप्त हो जाना चाहिये। तदनुसार यह समिति सिफारिश करती है कि संविधान के प्रारूप के भाग 14 के उपबंधों को इन विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए संशोधित कर देना चाहिये।

आपका विश्वस्त,
वल्लभभाई पटेल
सभापति।

परिशिष्ट 'ख'

परामर्शदातृ समिति के प्रतिवेदन की कंडिका 4 में उल्लिखित विशिष्ट उप-समिति का प्रतिवेदन

24 फरवरी 1948 के अपने अधिवेशन में अल्पसंख्यकों, मूलाधिकारों आदि सम्बन्धी परामर्शदातृ समिति ने पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल की अल्पसंख्यक समस्याओं पर प्रतिवेदन देने के लिये एक उपसमिति नियुक्त की थी जिसके सभापति सरदार वल्लभभाई पटेल तथा सदस्य पंडित जवाहरलाल नेहरू, डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद, डाक्टर अम्बेडकर और श्री मुन्शी थे। हम 23 नवम्बर को समवेत हुये थे और एतद्द्वारा अपना प्रतिवेदन उपस्थित करते हैं। हमें बहुत खेद है कि रुग्णावस्था के कारण डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद हमारे विचार-विमर्श के समय उपस्थित नहीं हो सके थे और हम उनकी सम्मति से लाभ नहीं उठा सके, किन्तु हमें उनसे पता चला है कि हम जिन निष्कर्षों पर पहुंचे हैं वे उनसे सर्वथा सहमत हैं।

2. परामर्शदातृ समिति को ध्यान होगा कि अगस्त 1947 में एक सत्र में संविधान सभा ने इस समस्या पर विचार किया था जिसे मोटे तौर पर अल्पसंख्यकों के लिये राजनैतिक संरक्षणों की समस्या कहा जा सकता है और सभा निम्न निष्कर्षों पर पहुंची थी:

(1) कि केन्द्रीय और प्रांतीय विधान मंडलों के समस्त निर्वाचन संयुक्त निर्वाचक मंडलों के आधार पर होंगे और कुछ उल्लिखित अल्पसंख्यकों के लिये उनकी जनसंख्या के अनुपात से स्थान रक्षित होंगे। यह रक्षण दस वर्षों के लिये होगा, जिसके अन्त में स्थिति पर पुनर्विचार होगा। पासंग नहीं होगा। किन्तु जिन अल्पसंख्यक सम्प्रदायों के लिये स्थान रक्षित हैं उनके सदस्यों को साधारण स्थानों पर भी खड़े होने का अधिकार होगा;

(2) कि मंत्रिमंडलों में अल्पसंख्यकों के लिये कोई वैधानिक स्थान-रक्षण नहीं होगा, किन्तु 1935 के भारत शासन अधिनियम के अन्तर्गत राज्यपालों को दिये गये निदेश-पत्र की कंडिका 7 के समान परम्परा का एक उपबंध संविधान के परिशिष्ट में लगा दिया जायेगा;

(3) कि अखिल-भारतीय और प्रान्तीय सेवाओं में प्रशासन की कुशलता के विचार को ध्यान में रखते हुए उन सेवाओं में नियुक्तियां करते समय अल्पसंख्यकों के दावों को ध्यान में रखा जायेगा; और

(4) कि अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करने के लिये केन्द्र में राष्ट्रपति द्वारा तथा प्रान्तों में राज्यपालों द्वारा एक अधिकारी नियुक्त किया जायेगा जो संरक्षणों के कार्य प्रभाव के विषय में क्रमशः संघीय और प्रान्तीय विधान मंडलों को प्रतिवेदन देगा।

यह विनिश्चय ऐसे समय पर हुए थे जब कि पूर्वी पंजाब तथा पश्चिमी बंगाल की जनसंख्या के ढांचे पर रेडक्लिफ पंचाट के प्रभाव ठीक-ठीक ज्ञात न थे और पूर्वी तथा पश्चिमी पंजाब की सीमा पर जनता का एक दु:खपूर्ण और वृहद् निष्क्रमण हो रहा था। अत: सभा ने पूर्वी पंजाब में सिक्खों तथा अन्य अल्पसंख्यकों के लिये संविधान में उपबंधित किये जाने वाले राजनैतिक क्षेत्र के अल्पसंख्यक अधिकारों के समुचे प्रश्न पर विचार स्थगित कर दिया। पश्चिमी बंगाल के प्रतिनिधियों के सुझाव पर सभा इस बात के लिये भी सहमत हो गई कि इस प्रश्न पर भी विचार स्थगित कर दिया जाये कि क्या उस प्रान्त में अल्पसंख्यकों को अपनी जनसंख्या के अनुसार रक्षित स्थानों के अतिरिक्त साधारण स्थानों पर खड़ा होने का अधिकार मिलना चाहिये।

3. हमें सौंपी गई सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समस्या सिक्ख-समस्या है। हमने उन सब मांगों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है जो की उनकी ओर से विविध संस्थाओं और व्यक्तियों ने रखी है; उनमें बहुत भिन्नता है और एक ओर यह सुझाव है कि कोई विशेष सांविधानिक संरक्षण आवश्यक नहीं है, तो दूसरी ओर शिरोमणि अकाली दल की अन्यन्त स्पष्ट मांगें भी हैं। मुख्यत: वे मांगे ये हैं:

(1) कि सिक्खों को विधान मंडल के लिये शुद्ध साम्प्रदायिक निर्वाचक मंडलों द्वारा अपने प्रतिनिधि चुनने का हक होना चाहिये;

(2) कि पूर्वी पंजाब के प्रान्तीय विधान मंडल में 50 प्रतिशत स्थान और केन्द्रीय विधान मंडल में 5 प्रतिशत स्थान सिक्खों के लिये रक्षित होने चाहियें;

(3) कि उनके लिये युक्त प्रान्त और दिल्ली में स्थान रक्षित होने चाहियें;

(4) कि अनुसूचित जाति सिखों को अन्य अनुसूचित जातियों के समान ही विशेषाधिकार होने चाहियें; और

(5) कि सेना में स्थानों के कुछ अनुपात का वैधानिक रक्षण होना चाहिये।

आप देखेंगे कि ये सुझाव उन विनिश्चयों से मूलत: भिन्न हैं जो सभा ने अन्य सब सम्प्रदायों के विषय में किये हैं, जिनमें कि अनुसूचित जातियां भी समाविष्ट हैं।

4. हमारे लिये यह कहना शायद ही अपेक्षित हो कि इस समस्या पर विचार करते समय हमें उन दु:खद विपत्तियों का पूरा ज्ञान है जो सिक्ख जाति को पंजाब विभाजन से पहले और पश्चात् झेलनी पड़ी हैं। पश्चिमी पंजाब के उपद्रवों के कारण उन्हें कई मूल्यवान प्राणों और बहुत सी भौतिक सम्पदा से हाथ धोना पड़ा है और इस बात में हिन्दुओं को भी सिक्खों के समान ही मुसीबतें झेलनी पड़ी हैं; पर सिक्खों के साथ यह विशेष दु:खद घटना हुई कि उन्हें कई ऐसे स्थानों को भी छोड़ देना पड़ा जो उनके धर्मानुसार बहुत पवित्र थे। यद्यपि हम पूरी तरह समझते हैं कि उन्हें कितना शारीरिक और मानसिक कष्ट उठाना पड़ा है, किन्तु हमें यह स्पष्ट दिखता है कि हमारे पास विचारार्थ जो प्रश्न भेजा गया है, उसे अवश्यमेव अन्य आधारों पर ही सुलटाना होगा।

5. सिक्ख संख्या के दृष्टिकोण से तो अल्पसंख्यक हैं, किन्तु वे किसी ऐसी कठिनाई से पीड़ित नहीं हैं जिनसे अन्य सम्प्रदाय पीड़ित हैं जिनका कि मामला परामर्शदातृ समिति के पास था। वे उच्च शिक्षा प्राप्त तथा शक्तिशाली सम्प्रदाय हैं और उनमें केवल सैनिकों के नहीं, किसानों और कारीगरों के भी बहुत गुण हैं और उद्योग करने का अत्यधिक साहस है। वास्तव में कोई ऐसा कार्यक्षेत्र नहीं है जिसमें सिक्खों को देश में किसी जाति से प्रतियोगिता का भय हो, और हमें पूरा विश्वास है कि, उनमें जो गुण हैं, उनके कारण वे ऐसी समृद्धि के स्तर पर शीघ्र ही पहुंच जायेंगे, जो कि अन्य सम्प्रदायों के लिये प्रतिस्पर्धा का कारण होगा। और भी अविभक्त पंजाब में तो वे जनसंख्या का 14 प्रतिशत भाग थे, किन्तु पूर्वी पंजाब में वे जनसंख्या का 30 प्रतिशत अंग हैं, इससे उन्हें प्रान्त के सार्वजनिक जीवन में अत्यधिक प्राधिकार का स्थान प्राप्त होगा।

6. हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हम विधान मंडलों में न साम्प्रदायिक निर्वाचक मंडलों की और न पासंग की ही सिफारिश कर सकते हैं जो कि शिरोमणि अकाली दल की मुख्य मांगें हैं। पहली बात तो यह है कि वे सिक्खों के ही कल्याणार्थ अपेक्षित नहीं हैं, जिसके कारण हम ऊपर बता चुके हैं। वास्तव में हमें यह दिखाई देता है कि संयुक्त निर्वाचक मंडलों और रक्षित-स्थानों और अतिरिक्त स्थानों पर भी चुनाव लड़ने के अधिकार के अंतर्गत, सिक्ख शायद अपनी जनसंख्या के अनुपात से अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त कर लेंगे, जबकि साम्प्रदायिक निर्वाचक मंडलों के आधार पर उनका प्रतिनिधित्व सीमित ही रहेगा। इस प्रतिनिधित्व को बढ़ाने का एकमात्र यही उपाय है कि उन्हें पासंग दे दिया जाये जिसका अर्थ यह है कि उस स्वत्व को कम करना जिसे कि अन्य जातियां न्यायपूर्वक अपना अधिकार समझती हैं। दूसरी बात यह है कि साम्प्रदायिक निर्वाचक मंडल और पासंग देश के सामान्य हितों की दृष्टि से निश्चय ही बुरी चीज है। दल की मांगें ठीक वे ही हैं जो कि मुस्लिम लीग मुस्लिमों के लिये मांगा करती थी और उससे जो दुःखपूर्ण परिणाम निकले उन्हें देश खूब जानता है। हमें पूरा विश्वास है कि यदि हमें ऐसे राज्य का निर्माण करना है जो कि शान्ति और युद्ध, समृद्धि और विपत्ति, सबमें संगठित रह सके तो संविधान में कोई ऐसा उपबंध नहीं होना चाहिये जिसका प्रभाव जनता के किसी वर्ग को सार्वजनिक जीवन की मुख्य धारा से अलग कर देना हो। इस सम्बन्ध में हम निम्नलिखित प्रस्ताव की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं जो कि संविधान सभा ने अपनी 3 अप्रैल 1948 की बैठक में पारित किया था:

> ''क्योंकि लोकतंत्र के समुचित रूप से कार्यान्वित होने के लिये और राष्ट्रीय एकता और संगठन के विकास के लिये यह अपेक्षित है कि साम्प्रदायिकता को भारतीय जीवन से निकाल दिया जाये, अतः इस सभा का यह मत है कि किसी ऐसी साम्प्रदायिक संस्था को, जो कि अपने संविधान द्वारा या अपने किसी अधिकारी या अंगों में निहित किसी विवेकाश्रित शक्ति के प्रयोग द्वारा किसी व्यक्ति को धर्म, मूलवंश या जाति के आधार पर या किसी अन्य आधार पर अपनी सदस्यता में शामिल करती है या उससे वंचित करती है, किसी कार्यवाही में लगने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिये, सिवाय उन कार्यवाहियों के जो कि सम्प्रदाय की

धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं के लिये आवश्यक हो और कि ऐसी कार्यवाहियों को रोकने के लिये सब आवश्यक, उपाय विधायिनी और प्रंशासनीय काम में लिये जाने चाहिये।''

सम्प्रदायवाद की परिभाषा करना सदा आसान नहीं है, किन्तु इसमें कुछ संदेह नहीं हो सकता कि पृथक् निर्वाचक मंडल इस भावना का कारण भी है और गम्भीर प्रतीक भी है। अतः दल की मांगें सभा के सुविचारित निर्णय से सर्वथा असंगत है।

यदि संविधान में सिक्खों के लिये साम्प्रदायिक निर्वाचक मंडल तथा पासंग जैसे विशेष संरक्षणों की प्रत्याभूति दी जाती है तो हमें भय है कि कुछ अन्य सम्प्रदायों को ऐसे ही विशेषाधिकारों से वंचित करना असम्भव होगा। विवरणी में युक्तियां भिन्न हो सकती हैं किन्तु मुख्य आधार एक सा होगा। हम इस सम्बन्ध में अनुसूचित जातियों का उल्लेख कर सकते हैं, जिनका शिक्षा तथा भौतिक जीवन का मापदंड, भारतीय स्तर की तुलना में भी, अत्यधिक नीचा है और इसके अतिरिक्त जो गम्भीर सामाजिक निर्योग्यताओं से पीड़ित हैं। वे सभा द्वारा स्वीकृत उपबंध से ही संतुष्ट हो गये हैं जिसका ऊपर कण्डिका 2 में उल्लेख किया गया है। हमें कोई ऐसी वैध युक्ति दिखाई नहीं देती जिससे कि सिक्खों के लिये संविधान में ऐसे रक्षणों का रखना उचित हो जो कि अनुसूचित जातियों को प्राप्त नहीं है। अनुसूचित जातियों का मामला तो केवल उदाहरण के लिये है। हमें विश्वास है कि शिरोमणि अकाली दल की मांग को स्वीकार करने का परिणाम यह होगा कि अन्य सम्प्रदायों के लिये ऐसे ही विशेषाधिकार अनिवार्यतः दिये जायें, इससे लौकिक राज्य की सम्पूर्ण विचारधारा ही नष्ट भ्रष्ट हो जायेगी, जो कि हमारे नये संविधान का आधार है।

7. तदनुसार हम सिफारिश करते हैं कि सिक्खों के लिये कोई विशेष उपबंध नहीं होने चाहियें, सिवाय उन सामान्य उपबंधों के, जो कि सभा ने कुछ अन्य सम्प्रदायों के लिये पहले ही स्वीकार किये हैं और जिनका संक्षिप्त उल्लेख कण्डिका 2 में किया गया है।

8. सभा ने पश्चिमी बंगाल के अल्पसंख्यकों को आरक्षित स्थानों पर खड़े होने का अधिकार देने के प्रश्न पर विचार स्थगित किया था, उसका कारण यही था कि पश्चिमी बंगाल के प्रतिनिधियों ने बताया था कि उस समय प्रान्त की जनसंख्या की रचना ज्ञात नहीं थी। यद्यपि पूर्वी बंगाल से अर्वाचिन निष्क्रमण के कारण पश्चिमी बंगाल में विविध सम्प्रदायों की जनसंख्या की ठीक-ठीक प्राक्कलन अनुमान का ही विषय है, पर मोटे तौर पर स्थिति स्पष्ट है और हम नहीं समझते कि कोई ऐसे कारण विद्यमान हैं जिनसे कि सभा द्वारा अन्य प्रान्तों के लिये स्वीकृत व्यवस्था पश्चिमी बंगाल में लागू न की जाये।

—वल्लभभाई पटेल।